COMING
INE

Board of Trade, Sir that the nation must s to close the ruinous orts, to beat the dollar

TABILITY IN NDONESIA

FISH MOTIVES BLAMED

AGUE, Sept 11.—Dr. Louis utch Premier, told delegates Indonesia and Borneo that d destruction prevailed in r the authority of the Indo-epublic because Republican alue their own power and above the interests of the d peoples''

said the Netherlands would responsibility for the early of "a free and independent States on a federative basis yal Union with the Nether-nam and the Netherlands

ed that as yet unorganized side the authority of the Republic, and all popula-ps "liberated from terror midation" would be able to tart with their political re-on in order to take their ace in the federation.

Jokorde Soekawati, Presi-ast Indonesia, declared that order had been restored in nesia

ed: "Nevertheless, we are e that this situation is un-ong as the present rulers in a, the Republican capital, e principle of the Lingakarta t reached between the d the Republicans for a ates of Indonesia under the own.

eption in the Netherlands ed us that the Nether-rnment is well disposed s and will leave no stone to create conditions as soon conditions necessary to the evelopment of the united donesia.'—Reuter.

SH CONSUL FIRED ON IN JAVA

IA, Sept 11.—Mr E. T. Lam-Charles Eaton, acting

The locomotive being swung aboard a cargo vessel at Por is one of a consignment of four new engines for In

CROSSED INTO U.S. SECTOR OF BERLIN

POLICEMEN JAILED

BERLIN, Sept 10.—Two Saxony (Russian zone) policemen who crossed the frontier into the U.S. sector of Berlin to arrest a man alleged to have taken plans of uranium mine in Marienberg were sentenced to five years' imprisonment today by an American military court.

The policemen said they had received orders on August 28 from the manager of the mine to enter the U.S. sector and arrest Hans Grassmen, a mining engineer, formerly employed in the mine.

Grassman told the court that he was a British subject, and had left Marienberg after having received an offer to emigrate to South Africa.

The policemen were found guilty of having illegally crossed the frontier, being in illegal possession of fire-arms and having attempted an unauthorized arrest.—Reuter.

RESTRICTION ON BOOK IMPORTS

LONDON, Sept 1[illegible].—On the eve of Sir Stafford Cripps' eagerly awaited plan for big scale stepping up of British exports, the British Government last night disclosed two new dollar saving import restrictions.

"The Board of Trade announced

SIGNS OF PACT WIT

"IRRECONCIL LOSING PO

LONDON, Sept position in Indo-C day said there group in the Viet Ho Chi-minh was an agreement

"The important yesterday at Hai-D is the result of leng Paris and pro the spot.

"This restatement China will occup Union will not sa the Viet-Minh Par for independe to equal voice conduct of other ha its section for rity guerril now e Minh prepare with Fran

Bao Dai

The poli come to term ered the ex and Bao l w living Kong, and

PLAN FOR OVE[...]
DOLLAR FA[...]

LONDON, Sept 12.—The President of [...] Stafford Cripps, told the British public to[...] exert one-third more than it does now if [...] gap of £600,000,000 between imports and e[...] famine and weather the economic crisis.

Addressing 2,000 leaders of industry, commerce, finance and labour in London, Sir Stafford Cripps gave details of the new export plan for which urgency is the keynote.

British exports must reach a total value of £126,000,000 a month. Their present monthly value was £31,000,000 less. By the end of next year, British exports must total 160 per cent of the 1938 figures.

Sir Stafford Cripps

But even that would not restore the nation's standard of living to the level of June last, before the series of further austerity cuts were announced. It assumed the continuation of severe austerity.

The Minister laid down "precise, attainable targets", instead of "fixing the target sky high and hoping that producers will get as near to it as they can without any real hope of their reaching it."

Industry Warned

Sir Stafford Cripps gave these warnings to both sides of industry. To employers he said: "We shall do what we can to encourage private enterprise. But the Government may step in failing a willing response from private firms."

Addressing workers Sir Stafford said: "We do not want to reduce workers' earnings, but I am certain we cannot look for higher wages through the ever-increasing spiral of prices and rates."

"We do not intend to introduce industrial conscription unless there is no other way out But I hope it will be possible to stop the drain of labour into less necessary industries and persuade men and women to enter into vital jobs."

To both branches of industries, he said it was essential that there should be the fullest consultation between workers and managements by joint production committees and [...] committees. For the plan to

विज्ञापन

युग वाणी में मेरी युगांत के बाद की रचनाएँ संगृहीत हैं, जिनमें मैंने युग के गद्य को वाणी देने का प्रयत्न किया है। यदि युग की मनोवृत्ति का किंचिन्मात्र आभास इनमें मिल सका तो मैं अपने प्रयास को विफल नहीं समझूँगा।

कालाकाँकर
मई, १९३९

श्रीसुमित्रानन्दन पंत

...s, he
... there
...itation be-
...nagements by
...ommittees and
For the plan to

कवि-श्री 'निराला' जी

को

सूची

	विषय	पृष्ठ
	बापू !	१३
१	युग वाणी	१४
२	नव दृष्टि	१५
३	मानव	१६
४	युग उपकरण	१७
५	नव संस्कृति	१८
६	पुण्य प्रसू	१९
७	चींटी	२१
८	पतझर	२४
९	शिल्पी	२५
१०	दो लड़के	२७
११	मानवपन	२९
१२	गंगा की साँझ	३१
१३	गंगा का प्रभात	३३
१४	मूल्यांकन	३५
१५	उद्बोधन	३६
१६	खोलो	३७
१७	मार्क्स के प्रति	३८
१८	भूत दर्शन	३९
१९	साम्राज्यवाद	४०
२०	समाज़वाद गांधीवाद	४१
२१	संकीर्ण भौतिकवादियों के प्रति	४२

	विषय	पृष्ठ
२२	धनपति	४३
२३	मध्यवर्ग	४४
२४	कृषक	४५
२५	श्रमजीवी	४६
२६	घन नाद	४७
२७	कर्म का मन	४८
२८	रूप का मन	४९
२९	रूप पूजन	५१
३०	रूप निर्माण	५३
३१	भूत जगत	५४
३२	जीवन मांस	५५
३३	मानव पशु	५७
३४	नारी	५८
३५	नर की छाया	६०
३६	बंद तुम्हारे द्वार ?	६१
३७	सुमन के प्रति	६२
३८	कवि	६३
३९	प्रकाश !	६४
४०	आम्र विहग	६५
४१	उन्मेष	६८
४२	अनुभूति	६९
४३	भव संस्कृति	७०
४४	हरीतिमा	७१
४५	प्रकृति के प्रति	७२
४६	द्वन्द्व	७३
४७	राग	७४
४८	राग साधना	७५
४९	रूप सत्य	७६

...ion of the coalition...

	विषय	पृष्ठ
५०	मुझे स्वप्न दो	७७
५१	मन के स्वप्न	७८
५२	जीवन स्पर्श	७९
५३.	मधु के स्वप्न	८०
५४	पलाश	८२
५५	पलाश के प्रति	८३
५६	केलिफ़ोर्निया पॉपी	८४
५७	बदली का प्रभात	८५
५८	दो मित्र	८६
५९	झंझा में नीम	८७
६०	ओस के प्रति	८८
६१	ओस बिन्दु	९०
६२	जलद	९१
६३	अनामिका के कवि	९२
६४	आचार्य द्विवेदी	९३
६५	आचार्य द्विवेदी	९४
६६	कुसुम के प्रति	९५
६७	क्रांति	९६
६८	जीवनतम	९७
६९	आओ	९८
७०	कृष्णघन	९९
७१	निश्चय	१००
७२	खोज	१०१
७३	वस्तु सत्य	१०२
७४	आवाहन	१०३
७५	लेनदेन	१०४
७६	भव मानव	१०५
७७	प्रकृति शिशु	१०६

	विषय			पृष्ठ
७८	आवेश	...	...	१०७
७६	आत्म समर्पण	...	...	१०८
८०	तुम ईश्वर	...	...	१०६
८१	वाणी	...	...	११०
८२	युग नृत्य	...	...	११२

युग वाणी

[गीत गद्य]

...nts by
...tees and
...or the plan to

बापू !

किन तत्वों से गढ़ जाओगे तुम भावी मानव को ?
किस प्रकाश से भर जाओगे इस समरोन्मुख भव को ?
सत्य अहिंसा से आलोकित होगा मानव का मन ?
अमर प्रेम का मधुर स्वर्ग बन जावेगा जग जीवन ?
आत्मा की महिमा से मंडित होगी नव मानवता ?
प्रेम शक्ति से चिर निरस्त्र हो जावेगी पाशवता ?
बापू ! तुमसे सुन आत्मा का तेजराशि आह्वान
हँस उठते हैं रोम हर्ष से, पुलकित होते प्राण !
भूतवाद उस स्वर्ग के लिए है केवल सोपान,
जहाँ आत्म दर्शन अनादि से समासीन अम्लान ।
नहीं जानता युग विवर्त में होगा कितना जन क्षय,
पर मनुष्य को सत्य अहिंसा इष्ट रहेंगे निश्चय ।
नव संस्कृति के दूत ! देवताओं का करने कार्य
आत्मा के उद्धार के लिए आए तुम अनिवार्य !

युगवाणी

युग की वाणी,
हे विश्वमूर्ति, कल्याणी !

रूप रूप बन जाँय भाव स्वर,
चित्र-गीत झंकार मनोहर,
रक्त मांस बन जाँय निखिल
भावना, कल्पना, रानी !
युग की वाणी !

आत्मा ही बन जाय देह नव,
ज्ञान ज्योति ही विश्व स्नेह नव,
हास, अश्रु, आशाऽकांक्षा
बन जाँय खाद्य, मधु, पानी।
युग की वाणी।

स्वप्न वस्तु बन जाय सत्य नव,
स्वर्ग मानसी ही भौतिक भव,
अन्तर जग ही बहिर्जगत
बन जावे, वीणापाणि, इ !
युग की वाणी!

सर्व मुक्ति हो मुक्ति तत्व अब,
सामूहिकता ही निजत्व अब,
बने विश्व जीवन की स्वरलिपि
जन जन मर्म कहानी।
कवि की वाणी !

नव दृष्टि

खुल गए छंद के बंध,
प्राश के रजत पाश,
अब गीत मुक्त,
औ' युग वाणी बहती अयास !
बन गए कलात्मक भाव
जगत के रूप नाम,
जीवन संघर्षण देता सुख,
लगता ललाम।

सुंदर, शिव, सत्य
कला के कल्पित माप-मान
बन गए स्थूल,
जग जीवन से हो एकप्राण।
मानव स्वभाव ही
बन मानव - आदर्श सुनकर
करता अपूर्ण को पूर्ण,
असुंदर को सुन्दर।

मा न व !

जग-जीवन के तम में
दैन्य, अभाव शयन में
परवश मानव !
बुन स्वप्नों के जाल
ढँक दो विश्व-पराभव
कुत्सित, गर्हित, घोर !

ऊर्णनाभ-से प्राण
सूक्ष्म, अमर अंतर-जीवन का
तानें मधुर वितान,
देश काल के मिला छोर !

पशु-जीवन के तम में
जीवन रूप मरण में
जाग्रत मानव !
सत्य बनाओ स्वप्नों को
रच मानवता नव,
हो नव युग का भोर !

युग उपकरण

वह जीवित संगीत, लीन हो जिसमें जग-जीवन-संघर्ष,
वह आदर्श, मनुज-स्वभाव ही जिसका दोष-शुद्ध निष्कर्ष।
वह अन्तः सौन्दर्य, सहन कर सके बाह्य वैरूप्य विरोध,
सक्रिय अनुकंपा, न घृणा का करे घृणा से जो परिशोध।

नम्र शक्ति वह, जो सहिष्णु हो, निर्बल को बल करे प्रदान,
मूर्त प्रेम, मानव मानव हों जिसके लिए अभेद्य, समान,
वह पवित्रता, जगती के कलुषों से जो न रहे संत्रस्त,
वह सुख, जो सर्वत्र सभी के सुख के लिए रहे संन्यस्त।

ललित कला, कुत्सित कुरूप जग का जो रूप करे निर्माण,
वह दर्शन-विज्ञान, मनुजता का हो जिससे चिर कल्याण।
वह संस्कृति, नव मानवता का जिसमें विकसित भव्य स्वरूप,
वह विश्वास, सुदुस्तर भव-सागर में जो चिर ज्योति-स्तूप।

रीति नीति, जो विश्व प्रगति में बनें नहीं जड़ बंधन-पाश,
—ऐसे उपकरणों से हो भव-मानवता का पूर्ण विकास।

नव संस्कृति

भाव कर्म में जहाँ साम्य हो संतत,
जग-जीवन में हो विचार जन के रत।
ज्ञान-वृद्ध, निष्क्रिय न जहाँ मानव मन,
मृत आदर्श न बंधन, सक्रिय जीवन।
रूढ़ि रीतियाँ जहाँ न हों आराधित,
श्रेणि वर्ग में मानव नहीं विभाजित।
धन-बल से हो जहाँ न जन श्रम शोषण,
पूरित भव-जीवन के निखिल प्रयोजन।

जहाँ दैन्य जर्जर, अभाव-ज्वर पीड़ित
जीवन यापन हो न मनुज को गर्हित।
युग युग के छाया-भावों से त्रासित
मानव प्रति मानव-मन हो न सशंकित।
मुक्त जहाँ मन की गति, जीवन में रति,
भव-मानवता में जन-जीवन-परिणति।
संस्कृत वाणी भाव, कर्म, संस्कृत मन,
सुन्दर हों जन-वास, वसन, सुन्दर तन।

—ऐसा स्वर्ग धरा में हो समुपस्थित
नव मानव-संस्कृति-किरणों से ज्योतित।

पुण्य प्रसू

ताक रहे हो गगन ?
मृत्यु-नीलिमा-गहन गगन ?
अनिमेष, अचितवन, काल-नयन ?—
निःस्पन्द शून्य, निर्जन, निःस्वन ?

देखो भू को !
जीव प्रसू को ।
हरित भरित
पल्लवित मर्मरित
कुंजित गुंजित
कुसुमित
भू को !

कोमल
चंचल
शाद्वल
अंचल,—
कल कल
छल छल
चल-जल-निर्मल,—

कुसुम खचित
मारुत सुरभित
खग कुल कूजित
प्रिय पशु मुखरित—

जिस पर अंकित
सुर मुनि वंदित
मानव पद-तल !

देखो भू को,
स्वर्गिक भू को,
मानव पुण्य-प्रसू को !

चींटी

चींटी को देखा ?
वह सरल, विरल, काली रेखा
तम के तागे-सी जो हिल डुल
चलती लघुपद पल पल मिल जुल
यह है पिपीलिका पाँति !
देखो ना, किस भाँति
काम करती वह संतत ?
कन-कन कनके चुनती अविरत !
गाय चराती,
धूप खिलाती,
बच्चों की निगरानी करती,
लड़ती, अरि से तनिक न डरती,
दल के दल सेना सँवारती,
घर, आँगन, जनपथ बुहारती !
देखो वह वल्मीकि सुघर,
उसके भीतर है दुर्ग, नगर !
अद्भुत उसकी निर्माण-कला,
कोई शिल्पी क्या कहे भला !
उसमें हैं सौध, धाम, जनपथ,
आँगन, गो-गृह, भंडार अकथ;
हैं डिम्ब-सद्म, वर शिविर रचित,
ड्योढ़ी बहु, राजमार्ग विस्तृत।

चींटी है प्राणी सामाजिक,
वह श्रमजीवी, वह सुनागरिक !

देखा चींटी को ?
उसके जी को ?

भूरे बालों की-सी कतरन,
छिपा नहीं उसका छोटापन,
वह समस्त पृथ्वी पर निर्भय
विचरण करती, श्रम में तन्मय,
वह जीवन की चिनगी अक्षय !

वह भी क्या देही है, तिल-सी ?
प्राणों की रिलमिल-झिलमिल-सी ?
दिन भर में वह मीलों चलती,

अथक, कार्य से कभी न टलती,
वह भी क्या शरीर से रहती ?
वह कण, अणु, परिमाणु ?
चिर सक्रिय वह, नहीं स्थाणु !

हा मानव !
देह तुम्हारे ही है, रे शव !
तन की चिंता में घुल निशिदिन
देह मात्र रह गए,—दबा तिन !
प्राणि प्रवर
होगए निछावर
अचिर धूलि पर !!
निद्रा, भय, मैथुनाहार
—ये पशु-लिप्साएँ चार—
हुई तुम्हें सर्वस्व-सार ?

धिक् मैथुन-आहार-यंत्र !
क्या इन्हीं बालुका-भीतों पर
रचने जाते हो भव्य, अमर
तुम जन-समाज का नव्य तंत्र ?
मिली यही मानव में क्षमता ?
पशु, पक्षी, पुष्पों से समता ?
मानवता पशुता समान है ?
प्राणिशास्त्र देता प्रमाण है ?

बाह्य नहीं, आंतरिक साम्य
जीवों से मानव को प्रकाम्य ?
मानव को आदर्श चाहिए,
संस्कृति, आत्मोत्कर्ष चाहिए;
बाह्य विधान उसे हैं बंधन
यदि न साम्य उनमें अंतरतम—
मूल्य न उनका चींटी के सम
वे हैं जड़, चींटी है चेतन !
जीवित चींटी, जीवन-वाहक,
मानव जीवन का वर नायक,
वह स्व-तंत्र, वह आत्म-विधायक !

× × ×

पूर्ण तंत्र मानव, वह ईश्वर,
मानव का विधि उसके भीतर ?

प त झ र

रिक्त हो रहीं आज डालियाँ,—डरा न किंचित्
रक्त पूर्ण, मांसल होगी फिर, जीवन रंजित।
जन्मशील है मरण : अमर मर मर कर जीवन,
झरता नित प्राचीन, पल्लवित होता नूतन।

पतझर यह, मानव जीवन में आया पतझर,
आज युगों के बाद हो रहा नया युगांतर!
बीत गए बहु हिम, वर्षातप, विभव पराभव,
जग जीवन में फिर वसंत आने को अभिनव!

झरते हों, झरने दो पत्ते,—डरो न किंचित्
नवल मुकुल मंजरियों से भव होगा शोभित।
सदियों में आया मानव जग में यह पतझर,
सदियों तक भोगोगे नवमधु का वैभव वर!

शिल्पी

इस क्षुद्र लेखनी से केवल
करता मैं छाया-लोक सृजन ?
पैदा हो मरते जहाँ भाव,
बुद्‌बुद-विचार औ' स्वप्न सघन ?

निर्माण कर रहे वे जग का
जो जोड़ ईंट, चूना, पत्थर,
जो चला हथौड़े, घन, क्षण क्षण
हैं बना रहे जीवन का घर ?

जो कठिन हलों की नोकों से
अविराम लिख रहे धरती पर ?
जो उपजाते फल, फूल, अन्न,
जिनपर मानव जीवन निर्भर ?

इस अमर लेखनी से प्रतिक्षण
मैं करता मधुर अमृत वर्षण,
जिससे मिट्टी के पुतलों में
भर जाते प्राण, अमर जीवन।

निर्माण कर रहा हूँ जग का
मैं जोड़ जोड़ मनुजों के मन,
मैं काट काट कटु घृणा कलह
रचता आत्मा का मनोभवन।

स्वर-कोमल शब्दों को चुन-चुन
मैं लिखता जन-जन के मन पर,—
मानव-आत्मा का खाद्य प्रेम,
जिस पर है जग-जीवन निर्भर।

मैं जग-जीवन का शिल्पी हूँ,
जीवित मेरी वाणी के स्वर,
जन-मन के मांस-खंड पर मैं
मुद्रित करता हूँ सत्य अमर।

दो लड़के

मेरे आँगन में, (टीले पर है मेरा घर)
दो छोटे-से लड़के आजाते हैं अकसर।
नंगे तन, गदबदे, साँवले, सहज छबीले,
मिट्टी के मटमैले पुतले,—पर फुर्तीले ।

जल्दी से, टीले के नीचे, उधर, उतर कर
वे चुन ले जाते कूड़े से निधियाँ सुन्दर,—
सिगरेट के ख़ाली डिब्बे, पन्नी चमकीली,
फ़ीतों के टुकड़े, तस्वीरें नीली पीली

मासिक पत्रों के कवरों की; औ' बन्दर से
किलकारी भरते हैं, ख़ुश हो-हो अंदर से।
दौड़ पार आँगन के फिर हो जाते ओझल
वे नाटे छः सात साल के लड़के मांसल ।

सुन्दर लगती नग्न देह, मोहती नयन-मन,
मानव के नाते उर में भरता अपनापन।
मानव के बालक हैं ये पासी के बच्चे,
रोम रोम मानव, साँचे में ढाले सच्चे।

अस्थि-मांस के इन जीवों का ही यह जग घर,
आत्मा का अधिवास न यह,—वह सूक्ष्म, अनश्वर।
न्योछावर है आत्मा नश्वर रक्त-मांस पर,
जग का अधिकारी है वह, जो है दुर्बलतर।

वह्नि, बाढ़, उल्का, झंझा की भीषण भू पर
कैसे रह सकता है कोमल मनुज कलेवर !
निष्ठुर है जड़ प्रकृति, सहज भंगुर जीवित जन,
मानव को चाहिए यहाँ मनुजोचित साधन।

क्यों न एक हो मानव मानव सभी परस्पर
मानवता निर्माण करें जग में लोकोत्तर ?
जीवन का प्रसाद उठे भू पर गौरवमय,
मानव का साम्राज्य बने,—मानव हित निश्चय।

जीवन की क्षण-धूलि रह सके जहाँ सुरक्षित,
रक्त मांस की इच्छाएँ जन की हों पूरित।
—मनुज प्रेम से जहाँ रह सकें,—मानव ईश्वर !
और कौन सा स्वर्ग चाहिए तुझे धरा पर ?

मानवपन

इस धरती के रोम रोम में
भरी सहज सुन्दरता,
इसकी रज को छू प्रकाश
बन मधुर विनम्र निखरता ।
पीले पत्ते टूटी टहनी,
छिलके, कंकर, पत्थर,
कूड़ा करकट सब कुछ भू पर
लगता सार्थक, सुन्दर ।

प्रणत सदा से धरिणी: इसका
चिर उदार वक्षस्थल
ज्योति-तमस, हिम आतप का,
मधु पतझर का रंगस्थल ।

जीवों की यह धात्री; इसकी
मिट्टी का उनका तन,
इस संस्कृत रज का ही प्रतिनिधि
हो सकता मानवपन ।

जीव जनित जो सहज भावना
संस्कृति उससे निर्मित,
चिर ममत्व की मधुर ज्योति—
जिससे मानव-उर ज्योतित ।

रीति-नीति वाणी - विचार
केवल हैं उसकी प्रतिकृति,

जीवों के प्रति आत्म-बोध ही
मनुष्यत्व की परिणति ।

विद्या, वैभव, गुण विशिष्टता
भूषण हों मानव के,
जीव प्रेम के बिना किंतु ये
दूषण हैं दानव के ।

रक्त-मांस का जीव : विविध
दुर्बलताओं से शोभित,
मनुष्यत्व दुर्लभ सुरत्व से,—
निष्कलंकता पीड़ित ।

व्याधि सभ्यता की है निश्चित
पूर्ण सत्य का पूजन,
प्राण हीन वह कला, नहीं
जिसमें अपूर्णता शोभन ।

सीमाएँ आदर्श सकल,
सीमा विहीन यह जीवन,
दोषों से ही दोष शुद्ध है
मिट्टी का मानवपन ।

गंगा की साँझ

अभी गिरा रवि, ताम्र कलश सा,
गंगा के उस पार,
क्लांत पांथ, जिह्व विलोल
जल में रक्ताभ प्रसार।
भूरे जलदों से धूमिल नभ,
विहग-छदों-से बिखरे—
धेनु - त्वचा - से सिहर - रहे
जल में रोओं-से छितरे।

दूर, क्षितिज में चित्रित-सी
उस तरु माला के ऊपर
उड़ती काली विहग पाँति
रेखा-सी लहरा सुन्दर।
उड़ी आ रही हलकी खेवा
दो आरोही लेकर,
नीचे ठीक तिर रहा जल में
छाया-चित्र मनोहर।

शांत, स्निग्ध संध्या सलज्ज मुख
देख रही जल तल में,
नीलारुण अंगों की आभा
छहरी लहरी दल में।
झलक रहे जल के अंचल से
कंचु - जलद स्वर्ण - प्रभ,

चूर्ण कुन्तलों - सा लहरों पर
तिरता घन ऊर्मिल नभ।

द्वाभा का ईषत् उज्ज्वल
कोमल तम धीरे घिर कर
दृश्य पटी को बना रहा
गंभीर, गाढ़ रँग भर-भर।
मधुर प्राकृतिक सुषमा यह
भरती विषाद है मन में,
मानव की सजीव सुंदरता
नहीं प्रकृति दर्शन में।

पूर्ण हुई मानव अंगों में
सुंदरता नैसर्गिक,
शत ऊषा संध्या से निर्मित
नारी प्रतिमा स्वर्गिक।
भिन्न भिन्न वह रही आज
नर नारी जीवन धारा,
युग युग के सैकत-कर्दम से
रुद्ध,— छिन्न सुख सारा।

गंगा का प्रभात

गलित ताम्र भव : भृकुटि मात्र रवि
रहा क्षितिज से देख,
गंगा के नभ नील निकष पर
पड़ी स्वर्ण की रेख ।
आर पार फैले जल में
घुल कर कोमल आलोक,
कोमलतम बन निखर रहा,
लगता जग अखिल अशोक ।
नव किरणों ने विश्वप्राण में
किया पुलक संचार,
ज्योति जड़ित बालुका पुलिन
हो उठा सजीव अपार ।
सिहर अमर जीवन कंपन से
खिल खिल अपने आप,
केवल लहराने को लहराता
मृदु लहर कलाप ।
सृजन तत्व की सृजन शीलता से
हो अवश, अकाम—
निरुद्देश्य जीवन धारा
बहती जाती अविराम ।
देख रहा अनिमेष,—हो गया
स्थिर, निश्चल सरिता जल,
बहता हूँ मैं, बहते तट,
बहते तरु, क्षितिज, अवनि तल ।

यह विराट् भूतों का भव
चिर जीवन से अनुप्राणित,
विविध विरोधी तत्वों के
संघर्षण से संचालित ।
निज जीवन के हित असंख्य
प्राणी हैं इसके आश्रित,
मानव इसका शासक,–आतप,
अनिल, अन्न, जल शासित ।
मानव-जीवन, प्रकृति-संचलन में
विरोध है निश्चित,
विजित प्रकृति को कर, उसने की
विश्व सभ्यता स्थापित ।
देश, काल, स्थिति से मानवता
रही सदा ही बाधित,
देश, काल, स्थिति को वश में कर
करना है परिचालित ।
क्षुद्र व्यक्ति को विकसित हो
अब बनना है जन-मानव,
सामूहिक मानव को निर्मित
करनी है संस्कृति नव ।
मानवता के युग प्रभात में
मानव - जीवन - धारा
मुक्त अबाध वहे–मानव-जग
सुख स्वर्णिम हो सारा ।

मूल्यांकन

आज सत्य, शिव, सुंदर करता
नहीं हृदय आकर्षित,
सभ्य, शिष्ट औ' संस्कृत लगते
मन को केवल कुत्सित।
संस्कृति, कला, सदाचारों से
भव-मानवता पीड़ित,
स्वर्ण - पींजड़े में है वंदी
मानव आत्मा निश्चित।
आज असुंदर लगते सुंदर
प्रिय पीड़ित, शोषित जन,
जीवन के दैन्यों से जर्जर
मानव-मुख हरता मन।
मूढ़, असभ्य, उपेक्षित, दूषित ही
भू के उपकारक,
धार्मिक, उपदेशक, पंडित,
दानी हैं लोक-प्रतारक।
धर्म, नीति औ' सदाचार का
मूल्यांकन है जन-हित,
सत्य नहीं वह, जनता से जो
नहीं प्राण-संबंधित।
आज सत्य, शिव, सुंदर केवल
वर्गों में हैं सीमित,
ऊर्ध्वमूल संस्कृति को होना
अधोमूल है निश्चित।

उद्बोधन

इस विश्री जगती में कुत्सित
अंतर-चितवन से चुन चुन कर
सार भाग जीवन का सुंदर
मानव ! भावी मानव के हित
जीवन पथ कर जाओ ज्योतित ।

अक्षय, शुद्ध, अपाप-विद्ध, नित,
मानव उर का सत्य अपरिमित,
उसे रूप-जग में कर स्थापित
भव-जीवन कर जाओ निर्मित ।
क्षुद्र, घृणित, भव-भेद-जनित
जो, उसे मिटा, भव-संघ भाव भर,
देश, काल औ' स्थिति के ऊपर
मानवता को करो प्रतिष्ठित ।

इस कुरूप जगती में कुत्सित
अंतर-बाह्य-प्रकृति पर पा जय,
नव विज्ञान ज्ञान कर संचय,
मानव ! भावी मानव के हित
नव संस्कृति कर जाओ निर्मित ।

खोलो

रुद्ध हृदय के द्वार,
—खोलो फिर इस बार!
मुक्त निखिल मानवता हो
जीवन सौन्दर्य प्रसार,—
खोलो फिर इस बार!

युग युग के जड़ अंधकार में
वंदी जन - संसार,
रूढ़ि-पाश में बँधी मनुजता
करती पशु - चीत्कार!—
खोलो फिर इस बार!

निर्मम कर आघात मर्म में,
निष्ठुर तड़ित प्रहार
चूर्ण करो गत संस्कारों को,
लेओ प्राण उबार!—
खोलो फिर इस बार।

गूँज उठे जन-जन में जीवन
उर में प्रणय पुकार,
पुनः पल्लवित हो मानव-जग,
हो वसंत, पतझार!—
खोलो फिर इस बार!

मार्क्स के प्रति

दंतकथा, वीरों की गाथा, सत्य, नहीं इतिहास,
सम्राटों की विजय लालसा, ललना भृकुटि-विलास ;
दैव नियति का निर्मम क्रीड़ा चक्र न वह उच्छृङ्खल,
धर्मान्धता, नीति, संस्कृति का ही केवल समर स्थल।

साक्षी है इतिहास, किया तुमने दुन्दुभि से घोषित,—
प्रकृति विजित कर, मानव ने की विश्व सभ्यता स्थापित।
विकसित हो, बदले जब जब जीवनोपाय के साधन,
युग बदले, शासन बदले, कर गत सभ्यता समापन।

सामाजिक सम्बन्ध बने नव, अर्थ भित्ति पर नूतन,
नव विचार, नव रीति नीति, नव नियम, भाव, नव दर्शन।
साक्षी है इतिहास,—आज होने को पुनः युगान्तर,
श्रमिकों का शासन होगा अब उत्पादन यन्त्रों पर।

वर्ग हीन सामाजिकता देगी सबको सम साधन,
पूरित होंगे जन के भव जीवन के निखिल प्रयोजन।
दिग् दिगंत में व्याप्त, निखिल युग युग का चिर गौरव हर,
जन संस्कृति का नव विराट् प्रासाद उठेगा भू पर,

धन्य मार्क्स! चिर तमच्छन्न पृथ्वी के उदय शिखर पर,
तुम त्रिनेत्र के ज्ञान चक्षु-से प्रकट हुए प्रलयंकर!

भूत दर्शन

कहता भौतिकवाद, वस्तु जग का कर तत्वान्वेषण :—
भौतिक भव ही एक मात्र मानव का अंतर दर्पण ।
स्थूल सत्य आधार, सूक्ष्म आधेय, हमारा जो मन,
वाह्य विवर्तन से होता युगपत् अंतर परिवर्तन ।
राष्ट्र, वर्ग, आदर्श, धर्म, गत रीति नीति औ' दर्शन
स्वर्ण पाश हैं : मुक्ति योजना सामूहिक जन जीवन ।
दर्शन युग का अंत, अंत विज्ञानों का संघर्षण,
अब दर्शन-विज्ञान सत्य का करता नव्य निरूपण ।
नवोद्भूत इतिहास भूत सक्रिय, सकरण, जड़-चेतन
द्वन्द्व तर्क से अभिव्यक्ति पाता युग युग में नूतन,
अस्त आज साम्राज्यवाद, धनपति वर्गों का शासन,
प्रस्तर युग की जीर्ण सभ्यता मरणासन्न, समापन ।
साम्यवाद के साथ स्वर्ण युग करता मधुर पदार्पण,
मुक्त निखिल मानवता करती मानव का अभिवादन ।

साम्राज्यवाद

परिवर्तन ही जग जीवन का नियम चिरंतन, दुर्जय,
साक्षी है इतिहास : युगों का प्रत्यावर्तन अभिनय।
मुखियों के, कुलपति, सामंत, महंतों के वैभव क्षण
विला गये बहु राज तंत्र,—सागर में ज्यों बुद्बुद कण।
रजत स्वप्न साम्राज्यवाद का ले नयनों में शोभन
पूँजीवाद निशा भी है होने को आज समापन।
विविध ज्ञान, विज्ञान, कला, यंत्रों का अद्भुत कौशल,
जग को दे बहु जीवन साधन, बाष्प, रश्मि, विद्युत् बल,
मरणोन्मुख साम्राज्यवाद, कर वह्नि और विष वर्षण,
अंतिम रण को है सचेष्ट, रच निज विनाश आयोजन।
विश्व क्षितिज में घिरे पराभव के हैं मेघ भयंकर,
नव युग का सूचक है निश्चय यह ताण्डव प्रलयंकर!
जन युग की स्वर्णिम किरणों से होगी भू आलोकित,
नव संस्कृति के नव प्ररोह होंगे शोणित से सिंचित ॥

समाजवाद-गांधीवाद

साम्यवाद ने दिया विश्व को नव भौतिक दर्शन का ज्ञान,
अर्थशास्त्र-औ'-राजनीति-गत विशद ऐतिहासिक विज्ञान।

साम्यवाद ने दिया जगत को सामूहिक जनतंत्र महान,
भव जीवन के दैन्य दुःख से किया मनुजता का परित्राण।
अंतर्मुख अद्वैत पड़ा था युग युग से निष्क्रिय, निष्प्राण,
जग में उसे प्रतिष्ठित करने दिया साम्य ने वस्तु विधान।

गांधीवाद जगत में आया ले मानवता का नव मान,
सत्य अहिंसा से मनुजोचित नव संस्कृत करने निर्माण।
गांधीवाद हमें देता जीवन पर अंतर्गत विश्वास,
मानव की निःसीम शक्ति का मिलता उससे चिर आभास।

व्यक्ति पूर्ण बन, जग जीवन में भर सकता है नूतन प्राण,
विकसित मनुष्यत्व कर सकता पशुता से जन का कल्याण।
मनुष्यत्व का तत्व सिखाता निश्चय हमको गांधीवाद,
सामूहिक जीवन विकास की साम्य योजना है अविवाद।

संकीर्ण भौतिकवादियों के प्रति

हाड़ मांस का आज बनाओगे तुम मनुज समाज ?
हाथ पाँव संगठित चलावेंगे जग जीवन काज !

दया द्रवित होगए देख दारिद्र्य असंख्य तनों का ?
अब दुहरा दारिद्र्य उन्हें दोगे निरुपाय मनों का ?

आत्मवाद पर हँसते हो भौतिकता का रट नाम ?
मानवता की मूर्ति गढ़ोगे तुम सँवार कर चाम ?

वस्तुवाद ही सत्य, मृषा सिद्धांतवाद, आदर्श ?
बाह्य परिस्थिति के आश्रित अंतर जीवन उत्कर्ष ?

मानव ! कभी भूल से भी क्या सुधर सकी है भूल ?
सरिता का जल मृषा, सत्य केवल उसके दो कूल ?

आत्मा औ' भूतों में स्थापित करता कौन समत्व ?
बहिरंतर, आत्मा-भूतों से है अतीत वह तत्व ।

भौतिकता, आध्यात्मिकता केवल उसके दो कूल,
व्यक्ति-विश्व से, स्थूल-सूक्ष्म से परे सत्य के मूल ।

———

धनपति

वे नृशंस हैं : वे जन के श्रमबल से पोषित,
दुहरे धनी, जोंक जग के, भू, जिनसे शोषित।
नहीं जिन्हें करनी श्रम से जीविका उपार्जित,
नैतिकता से भी रहते जो अंतः अपरिचित।
शय्या की क्रीड़ा कन्दुक है जिनको नारी,
अहंमन्य वे, मूढ़, अर्थबल के व्यभिचारी।
सुरांगना, संपदा, सुराओं से संसेवित,
नर पशु वे : भू भार : मनुजता जिनसे लज्जित।
दर्पी, हठी, निरंकुश, निर्मम, कलुषित, कुत्सित,
गत संस्कृति के गरल, लोक जीवन जिनसे मृत।
जग जीवन का दुरुपयोग है उनका जीवन,
अब न प्रयोजन उनका, अंतिम हैं उनके क्षण।

मध्य वर्ग

संस्कृति का वह दास : विविध विश्वास विधायक,
निखिल ज्ञान, विज्ञान, नीतियों का उन्नायक।
उच्च वर्ग की सुविधा का शास्त्रोक्त प्रचारक,
प्रभु सेवक, जन वंचक वह, निज वर्ग प्रतारक।

भोग शील, धनिकों का स्पर्धी, जीवन-प्रिय अति,
आत्म वृद्ध, संकीर्ण हृदय, तार्किक, व्यापक मति।
पाप पुण्य संत्रस्त, अस्थियों का वह कोमल,
वाक् कुशल, धी दर्पी, अति विवेक से निर्बल।

मध्यवर्ग का मानव, वह परिजन, पत्नी-प्रिय,
यशकामी, व्यक्तित्व प्रसारक, पर हित निष्क्रिय।
श्रमजीवी वह, यदि श्रमिकों का हो अभिभावक,
नवयुग का वाहक हो, नेता, लोक प्रभावक।

कृषक

युग युग का वह भारवाह, आकटि नत मस्तक,
निखिल सभ्य संसार पीठ का उसके स्फोटक !
वज्र मूढ़, जड़ भूत, हठी, वृष बांधव कर्षक,
ध्रुव, ममत्व की मूर्ति, रूढ़ियों का चिर रक्षक !

कर जर्जर, ऋण ग्रस्त, स्वल्प पैत्रिक स्मृति भू-धन,
निखिल दैन्य, दुर्भाग्य, दुरित, दुख का जो कारण,
वह कुबेर निधि उसे,—स्वेद सिंचित जिसके कण,
हर्ष शोक की स्मृति के बीते जहाँ वर्ष क्षण !

विश्व विवर्तनशील, अपरिवर्तित वह निश्चल,
वही खेत, गृह-द्वार, वही वृष, हँसिया औ' हल !
स्थावर स्थितियों का शिशु स्थावर स्थाणु कृषीवल,
दीर्घसूत्र, अति दुराग्रही, साशंक औ' वृषल !

है पुनीत संपत्ति उसे दैवी निधि निश्चित,
संततिवत् गो वृषभ; गुल्म, तृण, तरु, चिर परिचित !
वह संकीर्ण, समूह-कृपण, स्वाश्रित, पर-पीड़ित,
अति निजस्व-प्रिय, शोषित, लुंठित, दलित, क्षुधार्दित !

युग युग से निःसंग, स्वीय श्रमबल से जीवित,
विश्व प्रगति अनभिज्ञ, कूप-तम में निज सीमित,
कर्षक का उद्धार पुण्य इच्छा है कल्पित,
सामूहिक कृषि काय-कल्प, अन्यथा कृषक मृत।

श्रमजीवी

वह पवित्र हैं : वह, जग के कर्दम से पोषित,
वह निर्माता, श्रेणि, वर्ग, धन, बल से शोषित।
मूढ़, अशिक्षित,—सभ्य शिक्षितों से वह शिक्षित,
विश्व उपेक्षित,—शिष्ट संस्कृतों से मनुजोचित।

दैन्य कष्ट कुंठित,—सुंदर है उसका आनन,
गंदे गात वसन हों, पावन श्रम का जीवन।
स्नेह, साम्य, सौहार्दपूर्ण तप से उसका मन,
वह संगठित करेगा भावी भव का शासन।

भूख प्यास से पीड़ित उसकी भद्दी आकृति
स्पष्ट कथा कहती,—कैसी इस युग की संस्कृति!
वह पशु से जघन्य मानव—मानव की है कृति!
जिसके श्रम से सिंची समृद्धों की पृथु संपति।

मोह संपदा अधिकारों का उसे न किंचित्,
कार्य कुशल यंत्री वह, श्रम पटुता से जीवित।
शीत ताप, औ' क्षुधा तृषा में सदा संयमित,
दृढ़ चरित्र वह, कष्ट सहिष्णु, धीर, निर्भय चित।

लोक क्रांति का अग्रदूत, वरवीर, जनादृत,
नव्य सभ्यता का उन्नायक, शासक, शासित,—
चिर पवित्र वह : भय; अन्याय, घृणा से पालित,
जीवन का शिल्पी,—पावन श्रम से प्रक्षालित।

घननाद

ठङ् – ठङ् – ठन !
लौह नाद से ठोंक पीट घन
निर्मित करता श्रमिकों का मन ,
ठङ् – ठङ् – ठन !

'कर्म - क्लिष्ट मानव - भव - जीवन ,
श्रम ही जग का शिल्पि चिरंतन' ,
कठिन सत्य जीवन की क्षण क्षण
घोषित करता घन वज्र-स्वन.—
'व्यर्थ विचारों का संघर्षण ,
अविरत श्रम ही जीवन साधन ;
लौह काष्ठ मय, रक्त मांस मय
वस्तु रूप ही सत्य चिरंतन।'
ठङ् – ठङ् – ठन !

अग्नि स्फुलिंगों का कर चुंबन
जाग्रत करता दिग दिगंत घन,—
'जागो, श्रमिको, बनो सचेतन ,
भू के अधिकारी हैं श्रमजन।'
'मांस पेशियां हृष्ट, पुष्ट, घन ,
बटी शिराएँ, श्रम-बलिष्ट तन ,
भू का भव्य करेंगे शासन ,
चिर लावण्यपूर्ण श्रम के कण।'
ठङ् – ठङ् – ठन !

कर्म का मन

भव का जीवन मन का जीवन ,
कार्यार्थी को है मन बंधन ।

अवचेतन मन से होता रे ,
चेतन मन संतत संचालित ,
मन के दर्पण में भव की छवि
रंजित होकर होती विम्बित ।

रूप जगत की प्रतिछाया यह
भाव-जगत मानस का निश्चित ,
गत युग का मृत सगुण आज
मानव मन की गति करता कुंठित ।

अतः कर्म को प्रथम स्थान दो ,
भाव जगत कर्मों से निर्मित ।
निखिल विचार, विवेक, तर्क
भव रूप कर्म को करो समर्पित ।

प्रथम कर्म, कहता जन-दर्शन ,
पीछे रे सिद्धांत, मन, वचन ।

रूप का मन

निर्मित करो रूप का मन,—
रूप का मन ।

भाव सत्य पीड़ित मानव,
मत धरो स्वप्न के चरण,
वाष्प लोक के योग्य तुम्हारा
भाव सत्य विश्लेषण ।

रूप जगत यह, रूप कर्म कर,
रूप सत्य कर चिंतन,
रूप करो निर्माण विश्व का,
भरो रूप भव से मन ।

भाव भीत तुम, गत भावों के
पहने स्वर्णिम बंधन,
रूप हीन मृत भावों को
देते हो सत्य चिरंतन ।

देश काल से सीमित
गत संस्कृतियों का संघर्षण
नव्य रूप कर मुक्त,
भव्य भव भाव करेगा धारण ।

निर्मित करो रूप का नव मन,
रूप तत्व कर दर्शन,

रूप भाव का मूल,
रूप को भाव करो सब अर्पण।

मुक्त रूप का तत्व
बनेगा जगती का नव जीवन,
रूप मुक्ति हो भाव मुक्ति,
यह तात्विक सत्यान्वेषण।

रूप पूजन

करो रूप पूजन भव मानव !
भाव पुष्प कर अर्पण,
धरो रूप चरणों में नव नव
तन, मन, जीवन, यौवन।

निखिल शक्ति बँध रूप पाश में
करती संसृति नर्तन,
रूप परिधि में मुक्त प्रकाशित
शत शत रवि, शशि उडुगन।

आज अलंकृत करो धरा को
रूप रंग भर नूतन,
युग युग की चिर भाव राशि के
पहना वसन, विभूषण।

प्रकृति रूप इच्छा से उन्मद
करती सृजन सनातन,
रूप सृष्टि यह : भावों को दो
मधुर रूप परिरंभण।

सच है, जग जीवन विकास में
आते ऐसे युग क्षण,
जब मानव इस रूप-जगत का
करता सूक्ष्म निरूपण।

वह विश्लेषण युग देता
निर्माण शक्ति फिर नूतन,

अंतर जग का बहिर्जगत में
होता जब परिवर्तन।

आज युगांतर होने को है
जगती तल में निश्चित,
नव मानवता की किरणों से
विश्व क्षितिज है ज्योतित।

नव्य रूप से करो भव्य मानव!
स्वरूप जग निर्मित,
अखिल अवनि खिल उठे
रूप मानवता से हो कुसुमित।

वरो रूप को हे नव मानव!
रच भव प्रतिमा जीवित,
अंग अंग में देश देश की
भाव राशि कर अर्पित।

जन जन की विच्छिन्न शक्ति हो
जग जीवन में विकसित,
युग युग की अतृप्त आकांक्षा
उर उर की परिपूरित।

रूप निर्माण

रम्य रूप निर्माण करो हे,
रम्य वस्त्र परिधान,
रम्य बनाओ गृह, जनपथ को,
रम्य नगर जनस्थान।

रम्य सृष्टि हो रूप जगत की,
रम्य धरा शृंगार,
बाह्य रूप हो रम्य वस्तु का,
होंगे रम्य विचार।

रम्य रूप हो मानवता का,
अखिल मनोरम वेश,
भाषा रम्य मनुजता का मन
वहन करे निःशेष।

भेद जनित माया, माया का
रूप करो विन्यास,
मानव संस्कृति में विरोध डूबें,
हो ऐक्य प्रकाश।

रूप रचो भव मानवता का,
रूप भाव आधार,
रम्य रूप मानव समूह हो,
जीवन रूप विचार।

भूत जगत

जड़ चेतन हैं एक नियम के वश परिचालित,
मात्रा का है भेद, उभय हैं अन्योन्याश्रित।
भूत जगत की पावनता को करो न कलुषित,
निखिल जीव जग की सत्ता इससे परिपालित।

पावन हो भव धाम,—अनिल, जल, स्थल, नभ पावन,
पावन हों गृह, वसन,—विभूषण, भाजन पावन।
हृदय-बुद्धि हो पावन, देह, गिरा, मन पावन,
पावन दिशि पल, खाद्य श्वास, भव जीवन पावन।

सुंदर ही पावन, संस्कृत ही पावन निश्चय,
सुंदर हो भू का मुख, संस्कृत जीवन-संचय।
सुंदर भव-आलय, संस्कृत जड़-चेतन समुदय,
सुंदर नव मानव, संस्कृत भव-मानव की जय।

जीवन-मांस

मानवता का रक्त मांस
जग जीवन से चिर ओत प्रोत,
निखिल विचारों का बहता
इस अरुण रुधिर में जीवित स्रोत।

युग युग की चेतना अमर,
दिशि दिशि के जीवन का उल्लास,
रक्त मांस में देश देश की
संस्कृति का शाश्वत इतिहास।

कहाँ खोजने जाते हो
सुन्दरता औ' आनंद अपार ?
इस मांसलता में है मूर्तित
अखिल भावनाओं का सार।

मांस नहीं नश्वर रज,
ज्योतित मांस नहीं जड़ जीव-विलास
अंतर बाह्य चतुर्दिक् है तम,
रूप मांस है अमर प्रकाश।

शत वसंत, शत ग्रीष्म, शरद का
मांस बीज में है आवास,
ईश्वर है यह मांस, पूर्ण यह,
इसका होता नहीं विनाश।

मांस मुक्ति है भाव मुक्ति,
औ' भाव मुक्ति जीवन उल्लास,
मांस मुक्ति ही लोक मुक्ति
भव जीवन का जो चरम विकास।

मांसों का है मांस, मानुषी मांस
करो इसका सम्मान,
निर्मित करो मांस का जीवन,
जीवन मांस करो निर्माण।

मानव पशु

मानव के पशु के प्रति
हो उदार नव संस्कृति।
युग युग से रच शत शत नैतिक बंधन,
बाँध दिया मानव ने पीड़ित पशु तन।
विद्रोही हो उठा आज पशु दर्पित,
वह न रहेगा अब नव युग में गर्हित।
नहीं सहेगा रे वह अनुचित ताड़न,
रीति नीतियों का गत निर्मम शासन।
वह भी क्या मानव जीवन का लांछन?
वह, मानव के देव भाव का वाहन!
नहीं रहे जीवनोपाय तब विकसित,
जीवन यापन कर न सके सब इच्छित।
नैतिक सीमाएँ बहु कर निर्धारित,
जीवन इच्छा की जन ने मर्यादित।
मानव के कल्याण के लिए निश्चित
पशु ने अपनी बलि दी, देवों के हित।
जीवन के उपकरण अखिल कर अधिकृत
गत युग का पशु हुआ आज मनुजोचित।
देव और पशु, भावों में जो सीमित,
युग युग में होते परिवर्तित, अवसित।
मानव पशु ने किया आज भव अर्जित,
मानव देव हुआ अब वह सम्मानित।
मानव के पशु के प्रति
मध्य वर्ग की हो रति।

नारी

मुक्त करो नारी को मानव !
चिर वंदिनि नारी को,
युग युग की बर्बर कारा से,
जननि, सखी, प्यारी को।

छिन्न करो सब स्वर्ण पाश
उसके कोमल तन मन के,
वे आभूषण नहीं, दाम
उसके वंदी जीवन के।

पुरुष वासना की सीमा से
पीड़ित नारी जीवन,
नर नारी का तुच्छ भेद है
केवल युग्म विभाजन।

उसे मानवी का गौरव दे
पूर्ण सत्व दो नूतन,
उसका मुख जग का प्रकाश हो
उठे अंध अवगुंठन।

योनि मात्र रह गई मानवी
निज आत्मा कर अर्पण,
पुरुष प्रकृति की पशुता का
पहने नैतिक आभूषण।
नष्ट होगई उसकी आत्मा,
त्वचा रह गई पावन,

युग युग से अवगुण्ठित गृहिणी
सहती पशु के बन्धन।
खोलो हे मेखला युगों की
कटि प्रदेश से, तन से।
अमर प्रेम हो बन्धन उसका,
वह पवित्र हो मन से।
अंगों की अविकच इच्छाएँ
रहें न जीवन पातक,
वे विकास में बनें सहायक,
होवें प्रेम प्रकाशक।
क्षुधा तृषा ही के समान
युग्मेच्छा प्रकृति प्रवर्तित,
कामेच्छा प्रेमेच्छा बनकर
हो जाती मनुजोचित।
क्षुधा काम वश गत युग ने
पशु बल से कर जन शासित
जीवन के उपकरण सदृश
नारी भी कर ली अधिकृत।
मुक्त करो जीवन संगिनि को,
जननि देवि को आदृत,
जग जीवन में मानव के सँग
हो मानवी प्रतिष्ठित।
प्रेम स्वर्ग हो धरा, मधुर
नारी महिमा से मंडित,
नारी मुख की नव किरणों से
युग प्रभात हो ज्योति।

नर की छाया

पुरुषों की ही आँखों से
नित देख देख अपना तन,
पुरुषों ही के भावों से
अपने प्रति भर अपना मन,
लो, अपनी ही चितवन से
वह हो उठती है लज्जित,
अपने ही भीतर छिप छिप
जग से हो गई तिरोहित!

वह नर की छाया नारी!
चिर नमित नयन, पद विजड़ित,
वह चकित, भीत हिरनी सी
निज चरण चाप से शंकित।
मानव की चिर सहधर्मिणि,
युग युग से मुख अवगुण्ठित,
स्थापित घर के कोने में
वह दीप शिखा सी कंपित!

करती वह जीवन यापन
युग युग से पशु सी पालित,
बंदिनी काम कारा की,
आदर्श नीति परिचालित!!

बंद तुम्हारे द्वार ?

बंद तुम्हारे द्वार ?
मुसकाती प्राची में ऊषा ले किरणों का हार,
जागी सरसी में सरोजिनी, सोई तुम बार ?
बंद तुम्हारे द्वार ?

नव मधु में अस्थिर मलयानिल, भौंरों में गुंजार,
विहग-कंठ में गान, और पुष्पों में सौरभ-भार,
बंद तुम्हारे द्वार ?

प्राण ! प्रतीक्षा में प्रकाश औ, प्रेम बने प्रतिहार,
पथ दिखलाने को प्रकाश तुमसे मिलने को प्यार,
बंद तुम्हारे द्वार ?

गीत हर्ष के पंख मार आकाश कर रहे पार,
भेद सकेगी नहीं हृदय प्राणों की मर्म पुकार ?
बंद तुम्हारे द्वार ?

आज निछावर सुरभि, खुला जग में मधु का भंडार,
दबा सकोगी तुम्हीं आज उर में जीवन का ज्वार ?
बंद तुम्हारे द्वार ?

सुमन के प्रति

भाव, वाणी या रूप ?
तुम क्या हो चिर मूक सुमन !
किसके प्रतिरूप ?
मौन सुमन ! .
सुंदरता से अनिमिष चितवन
छू कोमल मर्मस्थल
मूक सत्व के भेद सकल
कह देती, (खुल दल पर दल)—
सहज समझ लेता मन !...
विजय रूप की सदा भाव पर,
भाव रूप पर निर्भर !
मैं अवाक् हूँ तुम्हें देखकर
मौन रूपधर !
रूप नहीं है नश्वर !—
सत्ता का वह पूर्ण, प्रकृत स्वर ,
सुंदर है वह,.....अमर !

कवि !....

हे राजनीतिविद्, अर्थविज्ञ !
रच शत शत वाद, विवाद, यंत्र,
परतंत्र किया तुमने मानव,
तुम बना न सके उसे स्वतंत्र।
हे दर्शनज्ञ, शत तर्कों से,
सच्छास्त्रों से पा गहन ज्ञान,
तुम भी न दे सके मानव को
उसकी मानवता का प्रमाण।
हे चित्रकार, ले रंग तूलि,
भर रूप रेख, छायाभ अंग,
चित्रित न कर सके मानव में
तुम मानवता के रूप रंग।
गायक, पा कोमल, मधुर कंठ,
रच वाद्य, ताल, आलाप, तान,
मानव उर तुम मानव उर में
लय कर न सके, गा मर्म गान।
हे शिल्पकार वर ! कठिन धातु,
जड़ प्रस्तर में भर अमर प्राण
दे सके नहीं मानव जग को
तुम मानवता का प्रकृत मान।
कवि, नव युग की चुन भाव राशि,
नव छन्द, आभरण, रस विधान,
तुम बन न सकोगे जन मन के
जाग्रत भावों के गीत यान ?

प्रकाश !

आओ, प्रकाश ! इस युग युग के
अवगुंठन से मुख दिखलाओ,
आओ हे, मानव के घट के
पट खोल मधुर श्री बरसाओ।

आओ, जीवन के आँगन में
स्वर्णिम प्रभात जग के लाओ,
मानव उर के प्रस्तर युग के
इस अंध तमस को बिखराओ।

विज्ञान ज्ञान की शत किरणें
जनपथ में बरसाते आओ,
मुरझाए मानस मुकुलों को
छूकर नव छवि में विकसाओ।

दिशि पल के भेद विभेदों को
तुम डुबा एकता में, आओ,
नव मूर्तिमान मानवता बन
जन जन के मन में बस जाओ।

आम्र विहग !

हे आम्र-विहग !—
तुम ताम्र सुभग
नव पर्णों में
छिपकर, उड़ेलते कर्णों में
मंजरित मधुर
स्वर-ग्राम प्रचुर !

उन्मुक्त नील...
तुम पंख ढील,
उड़ उड़ सलील
हो जाते लय
निस्सीम शांति में चिर सुखमय;—
तब नीड़-निलय में रुद्ध हृदय
हो उठता पीड़ातुर अतिशय !

फिर आम्र-विहग !
छिप ताम्र सुभग
नव पर्णों में
बरसाते आकुल कर्णों में
मंजरित मधुर
स्वर-गीत विदुर !

मैं भी प्रसार
अपने विचार
भावना-कल्पना-छन्द अपार,
निःसीम विश्व में हो विलीन

गाता नवीन
मधु के गाने,
जग में नव जीवन बरसाने,
मुरझा मानव-उर विकसाने!
हे आम्र विहग!

तुम सुनो सजग,—
जग का उपवन
मानव जीवन
है शिशिर-ग्रस्त
बहु व्याधि त्रस्त!

ये जीर्ण, शीर्ण, चिर दीर्ण पर्ण
जो स्रस्त, ध्वस्त, श्री-हत, विवर्ण,
क्षय हों समस्त,
युग सूर्य अस्त!

ये राष्ट्र वर्ग
बल शक्ति भर्ग,
बहु जाति-पाँति,
कुल वंश ख्याति,
द्रुत हों विनष्ट सब नरक स्वर्ग!

विश्वास अंध,
संघर्ष द्वंद्व,
बहु तर्कवाद
उर के प्रमाद,
गत रूढ़ि रीति
मृत धर्म नीति
ये हैं जगती की ईति भीति!

हों अंत
दैन्य जग के दुरंत,
आवे वसंत,
जीवन दिगंत
फिर से हो स्मित कुसुमित अनंत।

हों नग्न भग्न
आनंद मग्न,
संहार श्रांत
निर्माण लग्न।

सब क्षुधा-क्षुब्ध
कामना लुब्ध
हों तृप्त दृप्त
जग कार्य लिप्त।

अज्ञान चूर्ण
हों ज्ञान पूर्ण,
मानव समूह
हो एक व्यूह।

जग के सब भेद-भाव हों लय,
जीवन की बाधाएँ हों क्षय,
जय हो, मानव जीवन की जय!

उन्मेष

मौन रहेगा ज्ञान,
स्तब्ध निखिल विज्ञान!

क्रांति पालतू पशु-सी होगी शांत,
तर्क, बुद्धि के वाद लगेंगे भ्रांत।

राजनीति औ' अर्थशास्त्र
होंगे संघर्ष-परास्त।

धर्म, नीति, आचार—
रुँधेगी सबकी क्षीण पुकार!

जीवन के स्वर में हो प्रकट महान
फूटेगा जीवन रहस्य का गान।

क्षुधा, तृषा औ' स्पृहा, काम से ऊपर,
जाति, वर्ग औ' देश, राष्ट्र से उठकर,

जीवित स्वर में, व्यापक जीवन गान
सद्य करेगा मानव का कल्याण।

अनुभूति

रक्त-मांस की देह बन गई
जीवन-इच्छा निर्भर,
मधुर भावना, मदिर कल्पना
रुधिर-शिराएँ सुंदर।

रिक्त पूर्ण हो, शून्य सर्व,
जीवन से आज गया भर,
निश्चल मरण स्पृहा से चंचल
कँप कँप उठता थर्-थर्।

तमस नयन की तारा बन
चितवन करता आलोकित,
चिर अभाव बन गए भाव
हो लोक-प्रेम संपोषित।

अखिल अमंगल दैन्य भूलकर
वैर विरोध, विनत-फन।
मंत्र-मुग्ध फणियों-से करते
जीवन-स्वर में नर्तन।

भव संस्कृति

तुम हरित-कंचु,
सित ज्योति किरण छवि वसना,
भव संस्कृति की नव प्रतिमा।

निर्धन समृद्ध, शासक शासित,
तुमको समान संस्कृत प्राकृत,
गत धर्म कर्म, मृत रूढ़ि रीति तम अशना,
नव मानवता की महिमा।

संहार मग्न तुम सृजन लग्न,
कर राष्ट्र वर्ग बल भेद भग्न
भरती समत्व जगती में, तुम दिशि-रशना,
नव युग की गौरव गरिमा।

कर देश काल औ' प्रकृति विजित,
विज्ञान ज्ञान इतिहास ग्रथित,
मानव की विश्व विजय से तुम स्मित-दशना,
पृथ्वी की स्वर्ग मधुरिमा!

हरीतिमा

हँसते भू के अँग अँग,
हरित हरित रँग !

दूर्वा पुलकित भूतल
नवोल्लसित तृण तरु दल,
इंगित करते चंचल—
जीवन का जीवित रँग
हरित हरित रँग !

श्यामल, कोमल, शीतल
लोचन-प्रिय, प्राणोज्वल,
तन पोषक, मन संबल,
सजल सिंधु शोभित रँग
हरित हरित रँग !

हरित वसन, तन छबि सित,
जग जीवन प्रतिमा नित
हरती मानव का चित;
भव संस्कृति भावित रँग,
हरित हरित रँग !

प्रकृति के प्रति

हार गई तुम
प्रकृति !
रच निरुपम
मानव-कृति ।

निखिल रूप, रेखा, स्वर
हुए निछावर
मानव के तन, मन पर ।

धातु, वर्ण, रस-सार
बने अस्थि, त्वच, रक्त-धार,
कुसुमित अंग-उभार ।

सुंदरता, उल्लास,
छाया, गंध, प्रकाश,
बने रूप-लावण्य विकास,
नव यौवन-मधुमास ।

जीवन रण में प्रतिक्षण
कर सर्वस्व समर्पण,
पूर्ण हुई तुम, प्रकृति !
आज बन मानव की कृति !

द्वन्द्व

शीत ताप ,
दिन रात ,
सुख दुख ,
ह्रास विकास ,
जीवन के ही अंश-भाग।
इनके साथ बढ़ो, मानव !
जब प्रकृति तुम्हारी अवयव।

सहन करो चुपचाप
द्वन्द्वों के आघात ,
जीवन से होओ न विमुख।
वृक्षों-से ही बढ़ो अयास
सीख राग, फल-त्याग।
रहो साथ भव के, भव-मानव !
भाग तुम्हारा ही भव।

राग

राग, केवल राग !
छिपी चराचर के अंतर में
अनिर्वाप्य चिर आग,—
राग, केवल राग !

गूढ़ राग का संवेदन ही
जीवन का इतिहास,
राग-शक्ति का विपुल समन्वय
जन-समाज, संवास ।

निखिल ज्ञान, विज्ञानों में
वह पाता नव अभिव्यक्ति,
राग-तत्व ही मूल धातु,
संस्कृतियाँ रूप, विभक्ति ।

दुर्निवार यह राग, राग का
रूप करो निर्माण,
वेष्ठित करो राग से भव,
हो जन-जीवन कल्याण !

राग साधना

जीवन - तंत्री आज सजाओ
अमर राग तारों से,
गूँज उठें नभ धरा
प्रेम की स्वर्गिक झंकारो से !

राग-साधना करो मधुर
उर-उर के अखिल मिला सुर ,
प्रतिध्वनित हो राग
हृदय से, रोओं के द्वारों से ।

राग विश्व का जीवन,
संसृति का है सार सनातन ,
अभिव्यक्त हो राग,
भाव, वाणी औ' आचारों से ।

रूप सत्य

मुझे रूप ही भाता।
प्राण ! रूप ही मेरे उर में
मधुर भाव बन जाता।
मुझे रूप ही भाता।

जीवन का चिर सत्य
नहीं दे सका मुझे परितोष,
मुझे ज्ञान से वस्तु सुहाती,
सूक्ष्म बीज से कोष।

सच है, जीवन के वसंत में
रहता है पतझार,
वर्ण-गंधमय कलि-कुसुमों का
पर ऐश्वर्य अपार !

राशि राशि सौन्दर्य, प्रेम,
आनंद, गुणों का द्वार,
मुझे लुभाता रूप रंग
रेखा का यह संसार !

मुझे रूप ही भाता।
प्राण ! रूप का सत्य
रूप के भीतर नहीं समाता।
मुझे रूप ही भाता।

मुझे स्वप्न दो

मुझे स्वप्न दो, मुझे स्वप्न दो।
हे जीवन के जागरूक !
जीवन के नव नव मुझे स्वप्न दो।

स्वप्न-जागरण हो यह जीवन,
स्वप्न-पुलक-स्मित तन, मन, यौवन,
मेरे स्वप्नों के प्रकाश में
जग का अंधकार जावे सो।

वस्तु-ज्ञान से ऊब गया मैं,
सूखे मरु में डूब गया मैं,
मेरे स्वप्नों की छाया में
जग का वस्तु-सत्य जावे खो।

शिशिर शयित जग जीवन वन में
हों पल्लवित स्वप्न नव, क्षण में,
मेरे कार्यों में, वाणी में
नव नव स्वप्नों का गुंजन हो।

हे जीवन के जागरूक !
भव जीवन के नव मुझे स्वप्न दो।

मन के स्वप्न

सत्य बनाओ, हे,
मेरे मन के स्वप्नों को
सत्य बनाओ।

आज स्वप्न को सत्य,
सत्य को स्वप्न बना नव सृष्टि बसाओ।
आज ज्ञान को कर्म,
कर्म को ज्ञान बना भव मूर्ति सजाओ।
निखिल विश्व को व्यक्ति,
व्यक्ति को विश्व बना जग-जीवन लाओ।

सत्य बनाओ, हे,
मेरे जीवन-स्वप्नों को
सत्य बनाओ।

आज अखिल विज्ञान, ज्ञान को
रूप, गंध, रस में प्रकटाओ।
आत्मा की निःसीम मुक्ति को
भव की सीमा में बँधवाओ।
जन की रक्त-मांस इच्छा को
मधुर अन्न-फल में उपजाओ।

सत्य बनाओ, हे,
मानव उर के स्वप्नों को
सत्य बनाओ।

जीवन स्पर्श

क्यों चंचल, व्याकुल जन ?
फूट रहा मधुवन में जो सौन्दर्योल्लास,
कलि कुसुमों में राग-रंगमय शक्ति-विकास,
आकुल उसी के लिए जन-मन !
दौड़ रही रक्तिम पलाश में जीवन-ज्वाल,
आम्र-मौर में मदिर गंध, तरुओं में तरुण प्रवाल;
विहग-युग्म हो विह्वल सुख से आप
पंखों से प्रिय पंख मिला करते हैं प्रेमालाप—
अखिल विघ्न, भय, बाधाएँ कर पार
शीत, ताप, झंझा के सह बहु वार,
कौन शक्ति सजती जीवन का वासंती शृंगार ?
सभी उसी के लिए विकल मन ;
उसी शक्ति का पाने जीवन स्पर्श ,
रोम रोम में भरने विद्युत हर्ष ,
चिर चंचल, व्याकुल जन !

मधु के स्वप्न

रक्त पलाश ! रक्त पलाश !

सखे, मुझे दोगे सिंदूर के पुष्पों की ज्वाला औ' हास ?
आज उल्लसित धरा, पल्लवित विटपों में बहुवर्ण विकास ,
पीपल, नीम, अशोक, आम्र से फूट रहा हरिताभ हुलास ;
गीत निरत हैं युवक, नृत्य-रत युवती-जन स्मितमुख, सविलास ,
फिर भी स्वप्न नहीं आते उड़ उड़ सुख के पंखों में पास ।

रक्त पलाश ! रक्त पलाश !
मुझे चाहिए अब जन-जन के जीवन में ही नव मधुमास ।
जन जीवन से आज चाहता हूँ पाना जीवन उल्लास ,
तुम मुझको दोगे जीवन की ज्वाला का जाज्वल्य प्रकाश ?

प्रिय कचनार ! प्रिय कचनार !
मुझे बिना पत्रों की पुष्पों की डाली दोगे उपहार ?
सुंदर मधु ऋतु, सुंदर है गुंजित दिगंत का हरित प्रसार ,
ताम्र, रजत, मरकत, विद्रुम के विविध किसलयोंका मृदु-भार ;
सुंदर सलिल समीर आज, सुंदर लगता नभ का विस्तार ,
सुंदर निखिल धरित्री, सुंदर खग-मृग युग्मों का अभिसार ।

प्रिय कचनार ! प्रिय कचनार !
मानव-उर की आकांक्षाओं का है पर सौन्दर्य अपार !
आज बसाऊँगा मैं फिर से घर-घर स्वप्नों का संसार ।
मुझे गूँथने दोगे अपनी स्वर्ण-रजत कलियों का हार ?

आम्र रसाल ! ताम्र रसाल !
भौंरों से गुंजरित मंजरी सखे ! मुझे दोगे निज बाल ?
आज तुम्हारे अंग-अंग से फूट रही नव मधुकी ज्वाल ,
ईंगुर के पर्णों में दिशि दिशि नृत्य कर रहा स्वर्ण सकाल ;
मंजरियों के मदिर शरों से जर्जर जड़-चेतन इस काल ,
बौरों की उन्मद सुगंध पी अंध हुई भौंरों की माल ।

आम्र रसाल ! ताम्र रसाल !
कोकिल की आकुल ध्वनि सुन लद उठे पल्लवों से वन-शाल ,
आज लुभाऊँगा मैं जग को बुन-बुन नव स्वप्नों के जाल !
सखे ! मुझे दोगे स्वप्नों की स्वर्ण मंजरी अपनी बाल ?

पलाश !

मरकत बन में आज तुम्हारी नव प्रवाल की डाल
जगा रही उर में आकुल आकांक्षाओं की ज्वाल !
पीपल, चिलबिल, आम्र, नीम की पल्लव-श्री सुकुमार
तुम्हीं उठाए हो पर वसुधा का मधु-यौवन-भार !
वर्ण वर्ण की हरीतिमा का बन में भरा विकास ,
पर नव मधु की निखिल कामनाओं के तुम उच्छ्वास ।
शत शत पुष्पों की, रंगों की रत्नच्छटा, पलाश !
प्रकट नहीं कर सकती यह वैभव पुष्कल उल्लास ।
स्वर्ण मंजरित आम्र आज, औ' रजत, ताम्र कचनार
नील कोकिला की पुकार है, पीत भृंग गुंजार—
वर्ण स्वरों से मुखर तुम्हारे मौन पुष्प अंगार
यौवन के नव रक्त, तेज का जिन में मदिर उभार !
हृदय रक्त ही अर्पित कर मधु को, अपर्ण-श्री शाल !
तुमने जग में आज जला दी दिशि दिशि जीवन-ज्वाल !

पलाश के प्रति

प्राप्त नहीं मानव जग को यह मर्मोज्वल उल्लास
जो कि तुम्हारी डाल डाल पर करता सहज विलास !
आज प्रलय-ज्वाला में ज्यों गल गए विश्व के पाश ,
जीवन की हिल्लोल-लोल उमड़ी छूने आकाश ।
आकांक्षाएँ अखिल अवनि की हुईं पूर्ण उन्मुक्त ,
यह रक्तोज्वल तेज धरा के जीवन के उपयुक्त ।
उद्भिज के जीवन-विकास में हुआ नवीन प्रभात ,
तरुओं का हरितांधकार हो उठा ज्योति-अवदात ।
नवजीवन का रुधिर शिराओं में कर वहन, पलाश !
तृण-तरु के जग से मानव-जग तुमने किया प्रकाश ।
यह शोभा, यह शक्ति, दीप्ति यह यौवन की उद्दाम
भरती मन में ओज, दृगों को लगती है अभिराम।
जीवन की आकांक्षाओं का यह सौन्दर्य अमंद
मानव भी उपभोग कर सके मुक्त, स्वस्थ आनंद ।

कैलिफ़ोर्नियाँ पॉपी

कैसा प्रकाश से प्रेम तुम्हें,
छू स्वर्ण-रजत किरणें प्रभात
पीले सुफ़ेद सौ फूलों में
तुम खिल खिल पड़तीं पुलक गात !

जब वृन्त-मूल ! उड़ती होतीं
तुम तितली-सी सुख से उन्मुख,
पृथ्वी के हों ये डाल पात,
पर पार्थिव नहीं तुम्हारा सुख !

बंधन में भी हो सहज मुक्त
तुम, इसीलिए उड़कर क्षण में,
निज सुख की ही अतिशयता में
हो समा गई मेरे मन में !

बदली का प्रभात

निशि के तम में झर झर
हलकी जल की फुही
धरती को कर गई सजल !

अँधियाली में छन कर
निर्मल जल की फुही
तृण तक को कर उज्वल...

बीती रात,—
धूमिल सजल प्रभात
वृष्टि शून्य, नव स्नात !
अलस, उनींदा-सा जग,
कोमलाभ, दृग-सुभग !

कहाँ मनुज को अवसर
देखे मधुर प्रकृति-मुख ?
भव अभाव से जर्जर
प्रकृति उसे देगी सुख ?

दो मित्र

उस निर्जन टीले पर
दोनों चिलबिल
एक दूसरे से मिल,
मित्रों से हैं खड़े,
मौन, मनोहर !
दोनों पादप,
सह वर्षातप,
हुए साथ ही बड़े,
दीर्घ सुदृढ़तर ।
पतझर में सब पत्र गए झर,
नग्न, धवल शाखों पर
पतली, टेढ़ी टहनी अगणित
शिरा-जाल-सी फैली अविरल;—
तरुओं की रेखा-छबि अविकल
भू पर कर छायांकित ।
नील निरभ्र गगन पर
चित्रित-से दो तरुवर
आँखों को लगते हैं सुंदर
मन को सुखकर ।

झंझा में नीम

सर् सर् मर् मर्
रेशम के से स्वर भर,
घने नीम दल
लंबे, पतले, चंचल,
स्वसन-स्पर्श से
रोमहर्ष से
हिल-हिल उठते प्रतिपल !
वृक्ष शिखर से भू पर
शत शत मिश्रित ध्वनि कर
फूट पड़ा, लो, निर्झर
मरुत,—कम्प, अर...
झूम झूम, झुक झुक कर,
भीम नीम तरु निर्भर
सिहर सिहर थर् थर् थर्
करता सर् मर्
चर् मर् !
लिप-पुत गए निखिल दल
हरित गुंज में ओझल,
वायु वेग से अविरल
धातु-पत्र-से बज कल !
खिसक, सिसक, साँसे भर,
भीत, पीत, कृश, निर्बल,
नीम दल सकल
झर झर पड़ते पल पल !

ओस के प्रति

किस अकलुष जग से उतरे
तुम प्रतनु ओस !
तृण, कलि, कुसुम अधर पर बिखरे ?
किसने तुम्हें सजाया,
सुंदर, सुघर बनाया ?
रजत-बाष्प की सुभग
जलद-सीपी ने ?
ऐसी आभा देखी नहीं किसी ने !
सस्मित तुम से है प्रभात-जग,
स्वर्गिक मोती, अतुल कोष !
किसकी यह कल्पना ?
तुम्हें जो दिया बना ,
उज्वल,
कोमल,
चंचल,
निर्मल, निर्दोष !
चटुल अनिल ने तुम्हें तोल
सब को समान कर गोल गोल,
शशि-छबि से भर
तुम को सुखकर,
ढुलकाया भू के पलकों पर,
हे स्वप्न-सुघर !
तुम पर सहस्र रवि न्योछावर !

स्वर्गीय तुम्हारा लोल-लास,
जीवन के चल-पल का हुलास,
निज अचिर सत्त्व का कर विकास
तुम बने वाष्प आकाश !
ओऽस !
उर-परितोष !
ओ स्पर्श-शीत !
छवि-प्रीत
ओस !

ओस बिन्दु

ओस बिन्दु ! लघु ओस बिन्दु !
नीले, पीले औ' हरे, लाल ;
चंचल ताराओं-से जल जल ,
फैलाते शीतल, सजल ज्वाल !

कलरव करते, किलकार, रार
ये मौन-मूक,—तृण तरु दल पर ,
तकते अपलक, निश्चल सोए ,
उड़ उड़ पँखड़ियों पर सुंदर ।

ये पक्षी, मधुमक्खी, तितली ,
जुगनू, मछली, रवि, ऋक्ष, इंदु ,
निज नाम-रूप खो, जान-बूझ ,
सब बने हुए हैं ओस-बिन्दु !

जलद

तूल जलद, ऊर्ण जलद,
तूम घूम जल पूर्ण जलद,
कात मसृण जल-सूत
भू पट पर जीमूत
हरित काढ़ते तृण, तरु, छद।

स्तनित जलद, तड़ित जलद,
संसृति को कर चकित जलद,
इंद्रचाप रँग चित्र,
गज मृग रूप विचित्र
बनते रवि-शशि तरी सुखद।

धीर जलद, तूर्ण जलद,
श्वेत श्याम छबि पूर्ण जलद,
शिखी नृत्य पर लुब्ध;
दादुर ध्वनि से क्षुब्ध,
विरहिणि कृषि के दूत फलद।

अनामिका के कवि

श्री सूर्यकांत त्रिपाठी के प्रति

छंद बंध ध्रुव तोड़, फोड़कर पर्वत कारा
अचल रूढ़ियों की, कवि, तेरी कविता धारा
मुक्त, अबाध, अमंद, रजत निर्झर सी निःसृत,—
गलित, ललित आलोक राशि, चिर अकलुष अविजित !
स्फटिक शिलाओं से तूने वाणी का मंदिर
शिल्पि, बनाया,—ज्योति-कलश निज यश का धर चिर।
शिलीभूत सौंदर्य, ज्ञान, आनंद अनश्वर
शब्द शब्द में तेरे उज्वल जड़ित हिम शिखर।
शुभ्र कल्पना की उड़ान, भव-भास्वर कलरव,
हंस, अंश वाणी के, तेरी प्रतिभा नित नव;
जीवन के कर्दम से अमलिन मानस सरसिज
शोभित तेरा, वरद शारदा का आसन निज।
अमृत पुत्र कवि, यशःकाय तव जरामरणजित,
स्वयं भारती से तेरी हृत्तंत्री झंकृत।

आचार्य द्विवेदी के प्रति

(१)

भारतेंदु ने जिसकी अक्षय अमर नींव पर
प्रथम शिला का गौरव स्थापित किया पूर्वतर,
कुशल शिल्पि बहु विविध कीर्ति स्तभों से सुंदर
महिमा सुषमा जिसे दे गए, स्तुत्य यत्न कर,
भारत की वाणी का वह भव्योच्च सौधवर
अंतर्नयनों में क्या है आचार्य, पूर्णतर
उद्भासित हो उठा आपके दिव्य रूप धर?
ज्योति-विचुंबित, स्वीय कीर्ति का स्वर्ण कलश वर
जो पहले ही आप रख गए अग्र शिखर पर!
आर्य, आपके मनःस्वप्न को ले पलकों पर
भावी चिर साकार कर सके रूप रंग भर;
दिशि दिशि की अनुभूति, ज्ञान, शत भाव निरन्तर
उसे उठावें युग युग के सुख, दुःख अनश्वर,
—आप यही आशीर्वाद दें देव यही वर!

—

आचार्य द्विवेदी के प्रति

(२)

भारतेंदु कर गए भारती की वीणा निर्माण
किया अमर स्पर्शों ने जिसका बहुविधि स्वर-संधान
निश्चय, उसमें जगा आपने प्रथम स्वर्ण झंकार
अखिल देश की वाणी को दे दिया एक आकार !
पंखहीन थी अहा कल्पना, मूक कंठगत गान !
शब्द शून्य थे भाव; रुद्ध प्राणों से वंचित प्राण !
सुख दुख की प्रिय कथा स्वप्न ! वंदी थे हृदयोद्गार,
एक देश था सही, एक था क्या वाणी व्यापार ?
वाग्मि ! आपने मूक देश को कर फिर से वाचाल,
रूप रङ्ग से पूर्ण कर दिया जीर्ण राष्ट्रकंकाल !
शत कंठों से फूट आपके शतमुख गौरव गान
शत शत युग स्तभों पर तानें स्वर्णिम कीर्ति वितान;
चिर स्मारक सा उठ युग युग में भारत का साहित्य
आर्य, आपके यशःकाय को करे सुरक्षित नित्य।

कुसुम के प्रति

झर गए हाय, तुम कांत कुसुम!
सब रूप रंग दल गए बिखर,
रह सके न चारु-चिरंतन तुम,
जीवन की मधु-स्मिति गई बिसर!

चुपके-से झर, तुमने फल को
निज सौंप दिया जीवन, यौवन,
क्षण भर जो पलकों पर झलका
वह मधु का स्वप्न न रहा स्मरण।

चिर पूर्ण नहीं कुछ जीवन में
अस्थिर है रूप-जगत का मद,
बस आत्म-त्याग, जीवन-विनिमय
इस संधि-जगत में है सुखप्रद।

करुणा है प्राण-वृंत जग की,
अवलंबित जिस पर जग-जीवन,
भर देती चिर स्वर्गिक करुणा
जीवन का खोया सूनापन।

करुणा-रंजित जीवन का सुख,
जग की सुंदरता अश्रु-स्नात,
करुणा ही से होते सार्थक
ये जन्म-मरण, संध्या-प्रभात।

क्रांति

तुम अंधकार, जीवन को ज्योतित करती,
तुम विष हो, उर में मधुर सुधा सी झरती।
तुम मरण, विश्व में अमर चेतना भरती,
तुम निखिल भयंकर, भीति जगत की हरती।
तुम शून्य, अतुल ऐश्वर्य सदा बरसाती,
अपरूप, चतुर्दिक सुंदरता सरसाती।
निष्ठुर निर्मम, क्षुद्रों को भी अपनाती,
तुम दावा, वन को हरित भरित कर जाती।
तुम चिर विनाश, नव सृजन गोद में लाती,
चिर प्राकृत, नव संस्कृति के ज्वार उठाती।
तुम रुद्र, प्रलय-तांडव में ही सुख पाती,
जीवन वसंत तुम, पतझड़ वन नित आती।

जीवन-तम

आज अखिल आलोक बन गया
जीवन का घन तमस अपार,
किरण-जाल-सा फैला निर्मल
अँधियाली का नीला-ज्वार।
निखिल वस्तुओं का घनत्व यह,
रूपों का आकार-प्रकार,
सुंदरता, आनंद, मधुरिमा,
सकल गुणों का उज्वल सार।
मृत्स्ना-सा यह अंधकार,
चिर चेतन बीजों से उर्वर,
इसके रोओं में अंतर्हित
लोकों के रहस्य सुंदर।
निखिल सृष्टि के मूल इसीमें,
भव के पत्र, पुष्प औ' फल,
रूप, रंग, रस, पतझर-मधु,
जीवन की हरियाली मांसल।
आभाओं की आभा है
जीवन का अंधकार अविकार,
इसके कण-कण में हैं ज्योतित
सुखमा के असंख्य संसार।
अंतर का आलोक बन गया
यह जीवन-तम आज उदार,
सूक्ष्म रजत किरणों सा फैला
अँधियाली का नीला भार।

आओ !

आओ, मेरे स्वर में गाओ।
जीवन के कर्कश अपस्वर !
मेरी वंशी में लय बन जाओ।
अहंकार बन, राग द्वेष बन,
काम क्रोध भय विघ्न क्लेश बन,
शत छिद्रों से फूट फूट
शत निःश्वासों से मधु बरसाओ।

हे दूषित, हे कलुषित, गर्हित,
हे खंडित, हे त्यक्त, उपेक्षित,
मेरे उर में चिर पावन बन,
संगति, सत्व, पूर्णता पाओ।
बन विरोध संघर्षण में बल,
बन विनाश संशय में निश्चल,
चिर विश्वास-शक्ति बन हे,
भव रोदन को संगीत बनाओ।

कृष्ण घन !

मुसकाओ हे भीम कृष्ण घन !
गहन भयावह अंधकार को
ज्योति-मुग्ध कर चमको कुछ क्षण।
दिग् विदीर्ण कर, भर गुरु गर्जन,
चीर तड़ित से अंध आवरण,
उमड़ घुमड़ घिर रूम झूम हे
बरसाओ नव जीवन के कण।
घूम घूम छा निर्भर अंबर,
झूल झूल झंझा झोंकों पर,
हे दुर्दम उद्दाम, हरो भव ताप दाप
अभिमत कर सिंचन।
इंद्रचाप से कर दिशि चित्रित,
बर्हभार से केकी पुलकित,
हरित भरित हे करो धरणि को
हो करुणार्द्र, घोर वज्र स्वन !

निश्चय

संघर्षों में शांति बनूँ मैं।
अंधकार में पड़ जीवन के
अंधकार की कांति बनूँ मैं।

जग जीवन के ज्वारों में बह,
कोमल प्रखर प्रहारों को सह,
भव के क्रंदन किलकारों में
हँसमुख नीरव क्रांति बनूँ मैं।

घृणा उपेक्षा में रह अविचल,
निंदा लांछन से बन उज्वल,
त्रुटियों से ज्योतित कर निज पथ
भव-यात्रा की श्रांति बनूँ मैं।

झेल निराशा औ' निष्फलता,
दैन्य, स्वभाव जनित दुर्बलता,
आगे बढ़ूँ धीर एकाकी,
भाग्य चक्र को भ्रांति बनूँ मैं।

खोज

आज मनुज को खोज निकालो।
जाति वर्ण संस्कृति समाज से
मूल व्यक्ति को फिर से चालो।
देश राष्ट्र के विविध भेद हर,
धर्म नीतियों में समत्व भर,
रूढ़ि रीति, गत विश्वासों की
अंध यवनिका आज उठालो।

भाषा औ' भूषा के भीतर,
श्रेणि वर्ग से मानव ऊपर,
अखिल अवनि में रिक्त मनुज को
केवल मनुज जान अपनालो।
राजा प्रजा, धनी औ' निर्धन
सभ्य असंस्कृत, सज्जन दुर्जन
भव मानवता से सब को भर,
खंड मनुज को फिर से ढालो।

वस्तु सत्य

आज भाव से बनो वस्तु-भव।
चेतनता से रूप गंध रस
शब्द स्पर्श बन उपजो अभिनव।

बनो प्रेम से प्रेमी प्रियजन,
सुंदरता से सुंदर तन-मन,
आज अतुल आनंद राशि से
बनो विपुल जग जीवन उत्सव।

कारण से शुभ कर्म बन सकल
सूक्ष्म बीज से पत्र, पुष्प, फल,
नित्य मुक्ति में भव बंधन बन,
बनो शक्ति से खाद्य मधु विभव।

सीमा में हे बनो असीमित,
जन्म मरण में ही चिर जीवित,
पल पल के परिवर्तन में तुम
बनो सनातनता का अनुभव।

आवाहन

रूप धरो, नव रूप धरो।
जीवन के घन अंधकार
नव ज्योतित हो भव रूप धरो।
हे कुरूप, हे कुत्सित प्राकृत,
हे सुंदर, हे संस्कृत, सस्मित,
आओ जग जीवन परिणय में
परिचित-से मिल बाँह भरो।

कोमल कटु, कटु कोमल बन कर,
उज्वल मंद, मंद उज्वलतर,
दिवा निशा के ज्योति तमस मिल
साँझ प्रात अभिसार करो।

पतझर में मधु, मधु में पतझर,
सुख में दुख, दुख में सुख बनकर
जन्म मृत्यु में, जन्म-मृत्युहर!
भव की जीवन भीति हरो।
रूप धरो, नव रूप धरो।

लेनदेन

कातो अंधकार तन मन का।
नव प्रकाश के रजत-स्वर्ण से
बुनो तरुण पट नव जीवन का।

युग युग के भेदों को धुन धुन,
बर्बरता, पाशवता चुन चुन,
नव मानवता से ढँक दो हे,
कुत्सित नग्न रूप जन जन का।
दिशिपल के ताने बाने भर,
धूपछाँह रच संस्कृति सुंदर,
बीनो स्नेह सुरुचि संयम से
शील वसन नव भव यौवन का।

सजा पुरातन को कर नूतन,
देश देश का रँग अपनापन,
निखिल विश्व की हाट बाट में
लेन देन हो मानवपन का।

भव मानव

आज बनो फिर तुम नव मानव।
चुन चुन सार प्रकृति से अतुलित
जीवन रूप धरो हे अभिनव।

नभ से शांति, कांति रवि से हर,
भूतों में चेतनता दो भर,
निस्तलता जलनिधि से लेकर
भू से विभव, मरुत से ले जव।

सुमनों से स्मिति विहगों से स्वर
शशि से छवि, मधु से यौवन-वर,
सुंदरता, आनंद, प्रेम का—
भू पर विचर,—करो नव उत्सव।

आज त्याग तप, संयम साधन
सार्थक हों, पूजन आराधन,
नीरस दर्शन दर्शनीय—
मानव वपु पाकर मुग्ध करे भव।

निखिल ज्ञान विज्ञान समीक्षा,—
करता भव-इतिहास प्रतीक्षा,
मूर्तिमान नव संस्कृति बन,
आओ भव मानव! युग युग संभव।

प्रकृति-शिशु

बढ़े प्रकृति-शिशु भव मानव में।
भय का दे पाथेय प्रकृति ने
भेजा मनुज अपरिचित भव में।

बँधा मोह बंधन में अपने,
उर में इच्छाओं के सपने
जीवन का ऐश्वर्य खोजता
वह चिर जीर्ण जगत के शव में।

जीवन इच्छा को कर संस्कृत,
प्राकृत भय के तम को ज्योतित,
विकसित हो, मानव मानव को
वह अपना सा पा अनुभव में।

निज पर में समता कर निर्मित,
मानवता का सार संकलित;
वह भव जीवन का स्रष्टा हो,
द्रष्टा हो, रति हो चिर नव में।
बढ़े प्रकृति-शिशु भव मानव में।

आवेश

ज्यों मधुवन में गूँजते भ्रमर,
ज्यों आम्रकुंज में पिकी मुखर,
मेरी उर तंत्री से रह रह
फ़ूटते मधुर गीतों के स्वर।

ज्यों झरते हरसिंगार झर झर,
ज्यों हिम फुहार शुचि फहर फहर,
मेरे मानस से सुंदरता
निःसृत होती त्यों निखर निखर।

गिरि उर से ज्यों बहता निर्झर,
रवि शशि से तिग्म मधुरतर कर,
मेरे मन की आवेश शांति
गीतों में पड़ती बिखर बिखर!

आत्म समर्पण

रक्त मांस की अचिर देह में
तुमने अपनापन भर,
बना दिया इसको चिर पावन
नाम रूप ज्योतित कर।

बहुजन शून्य, अपरिचित जग में
प्रतिक्षण दे निज परिचय
रहने योग्य कर दिया इसको
स्नेह गेह शोभामय।

शत अतृप्त आशाऽकांक्षाएँ
तुम पर हो न्योछावर
पूर्ण हो गईं आज, जन्म की
युग युग की साधें वर।

निखिल ज्ञान विज्ञान तर्क
औ' जन्म मरण प्रश्नोत्तर
सार्थक सब हो गए आज
चिर तन्मय तुममें होकर।

तुम ईश्वर

सीमाओं में ही तुम असीम,
बंधन नियमों में मुक्ति सतत,
बहु रूपों में चिर एक रूप,
संघर्षों में ही शांति महत।

कलुषित दूषित में चिर पवित्र,
कुत्सित कुरूप में तुम सुंदर,
खंडित कुंठित में पूर्ण सदा,
क्षणभंगुर में तुम नित्य अमर।
तुम पतित क्षुद्र में चिर महान,
परित्यक्तों के जीवन सहचर,
तुम विपथ गामियों के चिर पथ,
जीवन्मृत के नव जीवन वर!

तुम बाधा विघ्नों में हो बल,
जीवन के तम में चिर भास्वर,
असफलताओं में इष्ट सिद्धि,
तुम जीवों में ही हो ईश्वर।

वाणी

वाणी, वाणी,
जीवन की वाणी दो मुझको भास्वर।
मौन गगन को भेद
बोलते जिस वाणी में उडुचर,
जिसमें नीरव गिरि से निःसृत
होते मुखरित निर्झर।

जिस वाणी में मेघ गरजते,
लहरा उठते सागर,
जिसमें नित दामिनी दमकती,
मोर नाचते सुंदर।

वाणी, वाणी,
मुझे वस्तु-वाणी दो पूर्ण, चिरंतन।
जिस वाणी में छू मलयानिल
पुलकों से भरता तन,
जिसमें मृदु मुख कुसुम खोलते,
अणु-अणु करते नर्तन।

जिस वाणी में क्षुधा, तृषा
औ' काम दीप्त करते तन,
जिसमें इच्छा, सुखदुख उठते,
आते शैशव, यौवन।

वाणी, वाणी,
मुझे सृष्टि की वाणी दो अविनश्वर।
जो बहु वर्ण, गंध, रूपों में
करती सृजन निरंतर,
जिस वाणी में अनुभव करते
चुपके निखिल चराचर।

जो वाणी चिर जन्म-मरण,
तम औ' प्रकाश से है पर,
जो वाणी जीवन की जीवन,
शाश्वत, सुंदर, अक्षर।
वाणी, वाणी,
मुझको दो घट घट की वाणी के स्वर।

युग नृत्य

नृत्य करो, नृत्य करो!
शिशिर समीर
मत्त अधीर,
प्रलयकर नृत्य करो,
मृत्यु से न व्यर्थ डरो।

जीर्ण शीर्ण विश्व पर्ण
हे विदीर्ण, हे विवर्ण,
काल भीत, रक्त पीत,
मर्मर भर सृजन गीत,
अभयकर नृत्य करो,
प्रगति क्षिप्र चरण धरो।

अनिल अनल नभ जल स्थल,
अचल चपल, दिशि औ' पल,
ज्योति अंध सूर्य चंद्र,
तार मंद्र, गीति छंद,
निगम ज्ञान, स्मृति पुराण,
प्रलयंकर नृत्य करो,
निखिल विश्व बंध हरो।

रूढ़ि रीति, न्याय नीति,
वैर प्रीति, ईति भीति,
क्षुधा तृषा, सत्य मृषा,
लज्जा, भय, रोष, विनय,

राग द्वेष, हर्ष क्लेश,
अभयंकर नृत्य करो,
जीवन जड़ सिन्धु तरो।

देश राष्ट्र, लौह काष्ट,
श्रेणि वर्ग, नरक स्वर्ग,
जाति पाँति, वंश ख्याति,
धनी अधन, भूपति जन,
आत्मा मन, वाणी तन,
प्रलयंकर नृत्य करो,
नव युग को अखिल वरो।

नृत्य करो, नृत्य करो,
शिशिर समीर,
क्षुब्ध अधीर,
तांडव गति नृत्य करो,
भूतल कृतकृत्य करो।

हमारी कविता पुस्तकें

आकुल अंतर—	श्री 'बच्चन'		१।।)
मधुशाला—	"	...	१।)
मधुबाला—	"	...	१।।)
एकांत संगीत—	"	...	१।।)
निशा निमंत्रण—	"	...	१।।)
खैय्याम की मधुशाला—	"	...	१।।)
मधुकलश—	"	...	१।।)
प्रारंभिक रचनाएँ—	"	...	१।।)
प्रारंभिक रचनाएँ—भाग २	"	...	१।।)
मत्स्यगंधा—	श्रीउदयशंकरभट्ट	..	१)
ऊर्मियाँ—	श्रीउपेन्द्रनाथ 'अश्क'	...	१)

हमारे नाटक

अजातशत्रु—	श्रीजयशङ्करप्रसाद	...	१।)
स्कंदगुप्त—	श्रीजयशङ्करप्रसाद	...	३)
चन्द्रगुप्त—	"	...	३)
कामना—	"	...	१।।)
जनमेजय का नागयज्ञ	"	...	१)
विशाख—	"	...	१)
राज्यश्री—	"	...	
ध्रुवस्वामिनी—	"	...	।।=)
एक घूँट—	"	...	।।।
महात्मा ईसा—	श्रीबेचनशर्मा 'उग्र'	...	२)
सिन्दूर की होली—	श्रीलक्ष्मीनारायणमिश्र	..	१।)
राजयोग—	"	...	१।)
आधी रात—	"	...	१)
समाज के स्तम्भ—	"	...	१)
गुड़िया का घर—	"	...	१)
बुद्धदेव—	श्रीविश्वम्भरसहाय 'व्याकुल'	...	१।)
कारवाँ—	श्रीभुवनेश्वरप्रसाद	...	१)
अछूत—	श्रीआनन्दीप्रसादश्रीवास्तव	...	१)
श्रीवत्स—	डा० कैलाशनाथभटनागर	...	१।।)
दो एकांकी नाटक—	श्रीसद्गुरुशरणअवस्थी	...	।।=)
रेशमी टाई—	डा० रामकुमारवर्मा	...	२)

हमारी कुछ अन्य पुस्तकें

पुस्तकें	लेखक		मूल्य
पाँच कहानियाँ—	श्रीसुमित्रानंदनपंत	...	१।
विपथगा—	श्री 'अज्ञेय'	...	
सोने का जाल—	श्रीराजेश्वरप्रसादसिंह	...	१।)
कम्बख्ती की मार—	श्री जे० पी० श्रीवास्तव	...	१।।)
पचास कहानियाँ—	श्रीविनोदशंकरव्यास	...	३)
इक्कीस कहानियाँ—	श्रीरायकृष्णदास श्रीवाचस्पतिपाठक	...	२)
तुलाराम शास्त्री—	श्रीअमृतलालनागर	...	१।।)
अतीत के चलचित्र—	श्रीमतीमहादेवीवर्मा	...	
स्मृति की रेखायें—	श्रीमतीमहादेवीवर्मा	...	
अग्निपूजक—	श्रीकेशवदेवशर्मा	...	१)
कुकुरमुत्ता—	श्रीसूर्यकान्त, त्रिपाठी 'निराला'	...	१।
मैंने कहा—	श्रीलक्ष्मीकान्तझा	...	१।'
मकरन्द—	श्रीआनन्दीप्रसादश्रीवास्तव	...	१।।)
अबलाओं का बल—	,,	...	२)
लड़कियों की कहानियाँ	,,	...	।।)

गद्य काव्य

साधना—	श्रीरायकृष्णदास	...	१।।)
संलाप—	,,	...	।=)
छायापथ—	,,	...	।।)
प्रवाल—	,,	...	।=)
कलरव—	अनु० श्रीरामचन्द्रटंडन	...	।।=)
पगला—	अनु० श्रीरायकृष्णदास	...	

विविध विषय

विचार विमर्श—	श्रीमहावीरप्रसादद्विवेदी	...	३।।)
संकलन—	,,	...	१।)
अतीत स्मृति—	,,	...	१।)
काव्य और कला—	श्रीजयशंकरप्रसाद	...	
जयशंकर प्रसाद—	श्री नन्ददुलारेवाजपेयी	...	
तुलसी संदर्भ—	डा० माताप्रसादगुप्त	...	१।।)

A...
Squadr...
Adm Be...
Chief of th...
anchored tod...
day goodwill c...
ascribe special im...
—Reuter.

* *

International Trade ...
The signing of 14 more t... ments has brought the total tariff negotiations completed Geneva International Trade Co... ence to 41, it was announced he... today. A further 67 bilateral negotiations are in the process of being settled. Since the conference opened in April this year, the tariff negotiating teams have held 749 meetings.—Reuter.

* * *

Reprieve Recommended For Convicted Indian.—The British Home Secretary has recommended a reprieve for Abdul Jubber, 35-year-old Indian engineer, who was sentenced to death at the Birmingham Assizes on July 24 for the murder of Alfred Wagstaff. Jubber was convicted of murdering Wagstaff, a 19-year-old plasterer, by stabbing him after a café fight at Coventry on June 13. The jurors recommended mercy but the Criminal Appeal Court dismissed his appeal.—Reuter.

* * *

Imports Into Malaya.—All permits already approved for the import of goods into the Malayan Union from whatever source have been recalled for scrutiny by the Acting Controller of Customs of the Malayan Union, it was officially announced in Singapore on Thursday. The measure is one of those made necessary by the British balance of payments crisis.—Reuter.

* * *

Passengers Forbidden To Disembark.—Chinese authorities on Wednesday forbade the disembarkation in Shanghai of 27 passengers aboard the Russian vessel Ilyich. They alleged that it was a violation of China's navigation laws which prohibit foreign vessels from engaging in coastal traffic.

* * *

Six Prisoners Die After Drink ...
Coffee.—Six prisoners died and ... are critically ill after drink... alcohol mixed with coff... turnal "party" at a St... near Belle Glade i...

LAKE SUCCESS, Sept 11.—The USA intends to ... Council to drop the Balkans issue from its agenda so that the Assembly can make a recommendation, it was learned tod...

Greece applied to the Security Council on December 3, 1946, accusing Albania, Bulgaria and Yugoslavia of supporting guerrilla warfare in northern Greece and threatening the territorial integrity of Greece. She complained that the situation was likely to endanger maintenance of international peace and security. The Security Council sent out a Fact-Finding Commission to the Balkans, which reported in June.

Under Article 12 of the Charter the General Assembly has no right to take action in any dispute as long as it is on the Security Council agenda.

A tricky point of procedure now is whether Russia will claim that by dropping the matter from the agenda the Security Council automatically dissolves the Balkan subsidiary investigation group now operating in Salonika and which is reporting to the main Commission.

A U.S. spokesman said that the USA would fight such a move as, in the U.S. view, the subsidiary group remains in existence as long as the Council take no final action on the Balkans Commission's report.—Reuter.

BRITISH PROTEST TO BULGARIA

LONDON Sept 11.—Britain has sent a Note to Bulgaria protesting against the suppression last month of the Agrarian Union Opposition Party which polled 30 per cent of the votes in the 1946 election, it was announced tonight. The Note, handed to the Bulgarian Foreign Office in Sofia by Mr J. S. Bennett, British Political Representative, declared that in the view of the British Government, suppression of the party involved a denial to a large section of the Bulgarian people of their democratic rights.

The Note said this also constituted a violation of the principles embodied in Article II of the peace treaty which the Bulgarian Grand National Assembly had just previously approved. This article in the treaty, which Bulgaria ratified in August and is expected to come into effect next Monday, guarantees political liberty.—Reuter.

HUNGARIAN PREMIER EJECTED FROM PARTY

BUDAPEST, Sept 12.—The Hungarian Prime Minister, M Lajos Dinnyes, and other Ministers were yesterday ejected from the Small-Holders Party Political Committee and will probably be unable to take office in the new Government.

The Small-Holders Party Executive ...

assurances of support for ... attempt to overthrow th... Government, the Tiran... dent of Tanjug, the offici... news agency, reported ve...

In return for American support, the indictment a... the defendants, including former deputies of the Al... ple's Assembly, were to f... and British intelligence sc... secret information of po... military importance.

in July of last year the ... alleged to have planned a... on the life of Gen Enver H... nian Prime Minister.—Reu...

YUGOSLAV PROTES... GREECE

BELGRADE, Sept 12.—... against alleged border pro... Greek forces on September ... lodged with the Greek Gov... the Yugoslav Government, ... Chargé d'Affaires in Athe... slav Foreign Office spokes... here today.

The Greeks were said to ... six shells into Yugoslav te... miles west of a point where ... Bulgarian and Yugoslav ... meet.

The Yugoslav Foreign Of... man denied reports in ... abroad that fighting was g... tween the Yugoslav Army ... slav rebels in Macedonia a... He also denied Turkish ... large-scale persecutions of ... Yugoslavia.

Asked about the recent ... Note to Turkey, charging Tu... harbouring Yugoslav war ... the spokesman said that so... answer had been received ... Turkish Government.—Reut...

INDIA-UNION DIS... A MAJOR ISSU...

NEW YORK, Sept 11.—... criticism of the South Afr... Government for its "continua... of the decision of UNO" ... to treatment of Indians ... Union was made by Mr ... ree, leader of the Passive ... Council of South Africa, ... val in New York.

Mr Choudree was acco... Mr A. I. Meer, anoth... the Council, and both w... visers to the Indian del... the issue comes up befo... eral Assembly.

Mr Choudree ...

...chmond, USA, ... railways ...

...IET-NAM ... FRANCE

...E" GROUP ... LARITY

...Discussing the ... The Times to... evidence that a ... Party of Dr ... prepared to make ... ance. ... nouncement made ... by M Bollaert ... deliberations in ... negotiations on ...

... the place Indo-... thin the French ... that section of ... which still fights ... et-Nam, entitled ... other nations ... national affairs. ... ere is evidence ... rded by the ... is losing ... who are tired of ... rfare and that ... r group in the ... make an agree-...

...osition

... are ready to ... some time con... of rallying ... of Annam, ... in Hong ... representa-... by a